नन्दा

उत्तराखण्ड महिला परिषद् की पत्रिका

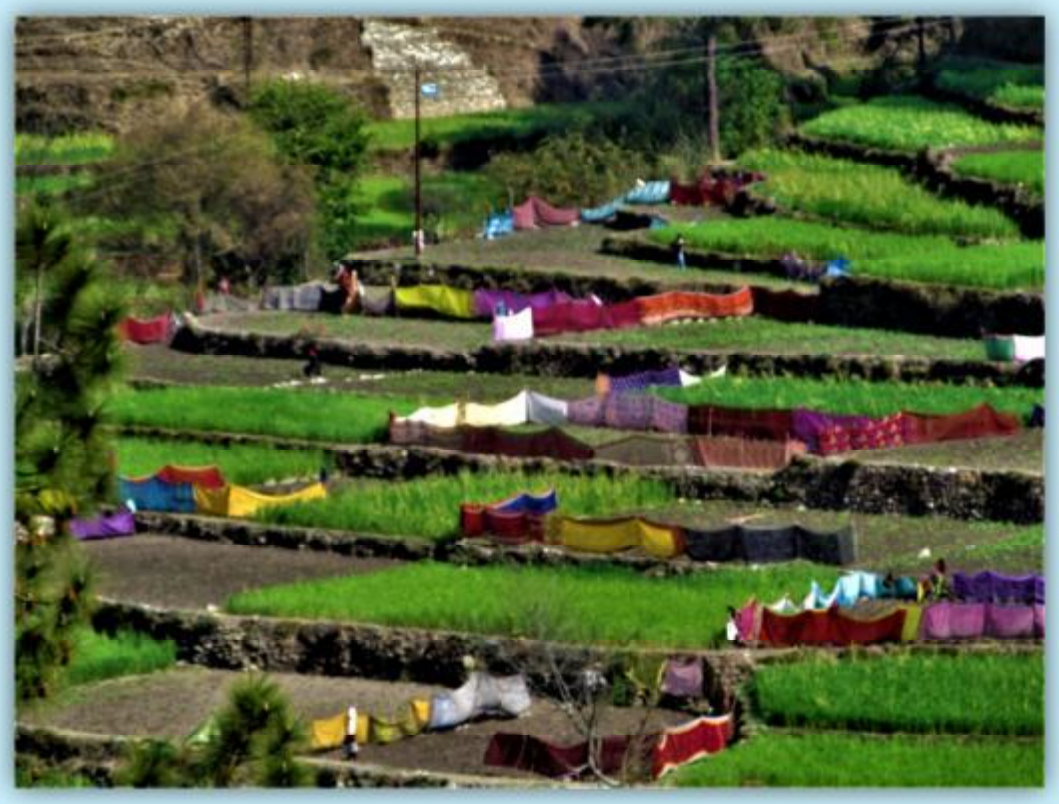

उत्तराखण्ड महिला परिषद्, अल्मोड़ा

अक्टूबर, 2022

वर्ष -21

अंक-22

(केवल आतंरिक वितरण हेतु)

सर्वाधिकार सुरक्षित ©

प्रतियाँ – 1500

प्रकाशक
उत्तराखण्ड महिला परिषद् द्वारा
उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान, अल्मोड़ा – 263601

प्रकाशन सहयोग
राजेश्वर सुशीला दयाल चैरीटेबल ट्रस्ट, नई दिल्ली

परिकल्पना एवं सम्पादन
अनुराधा पाण्डे

विशेष आभार
पद्मश्री डॉ0 ललित पाण्डे, उत्तराखण्ड महिला परिषद् से जुड़े सभी महिला संगठन

सहयोग
रमा जोशी, धरम सिंह लटवाल, कैलाश पपनै, सुरेश बिष्ट, कमल जोशी, जी. पी. पाण्डे, जीवन चन्द्र जोशी

सभी फोटो
अनुराधा पाण्डे

बैक कवर फोटो
सुरेश बिष्ट

टंकण
धरम सिंह लटवाल

मुद्रक
सत्य शांति प्रेस
लाला बाजार, अल्मोड़ा
फोन–9997157413

उत्तराखण्ड महिला परिषद् सहयोगी संस्थाएं

जनपद	संस्थाएं
अल्मोड़ा	➢'सीड', सुनाड़ी, द्वाराहाट ➢पर्यावरण चेतना मंच, मैचून ➢राइज, सेराघाट ➢उत्तराखण्ड शिवा शक्ति समिति, दन्या
बागेश्वर	➢पर्यावरण एवं शिक्षा समिति, शामा ➢ग्रामीण उत्थान समिति, कपकोट
पिथौरागढ़	➢शैक्षणिक ग्रामोन्नति समिति, गणाई–गंगोली ➢मानव विकास समिति, पव्वाधार ➢उत्तरापथ सेवा संस्थान, मुवानी
चम्पावत	➢पर्यावरण संरक्षण समिति, पाटी
नैनीताल	➢जनमैत्री संगठन, गल्ला
चमोली	➢नवज्योति महिला कल्याण संस्थान, गोपेश्वर ➢'शेप' बधाणी, कर्णप्रयाग ➢'जनदेश' सलना, जोशीमठ ➢लोक जागृति विकास संस्था, कर्णप्रयाग ➢लोक कल्याण विकास समिति, सगर
रूद्रप्रयाग	➢हिमालयन ग्रामीण विकास संस्थान, ऊखीमठ
पौड़ी गढ़वाल	➢नयारघाटी ग्राम स्वराज्य समिति, बाडियूं ➢नीलकंठ सेवा संस्थान, मलेलगाँव
टिहरी गढ़वाल	➢घनश्याम स्मृति शिक्षा एवं कल्याण संस्थान, बडियारगढ़

पत्रिका में दिये गये विचार लेखक/लेखिका के हैं। परिषद् का इससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

नन्दा

उत्तराखण्ड महिला परिषद् की पत्रिका

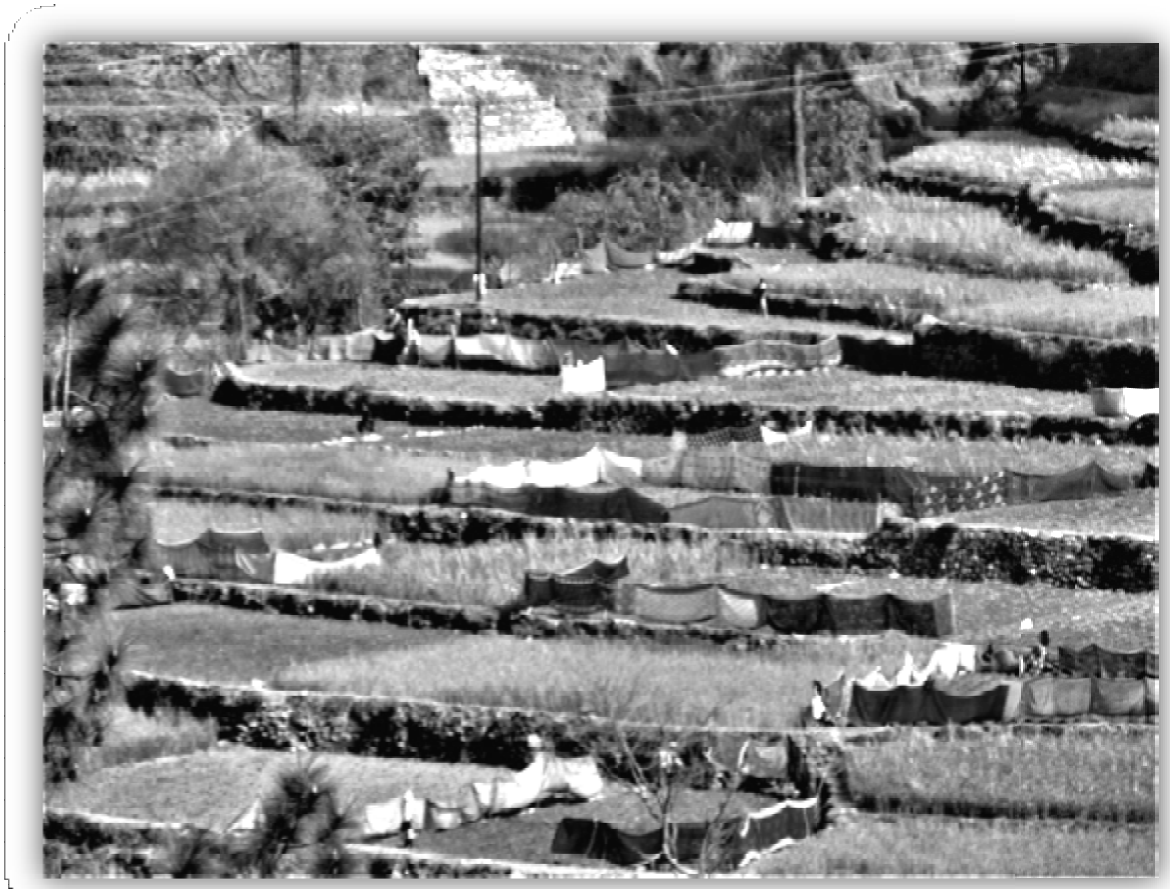

उत्तराखण्ड महिला परिषद्, अल्मोड़ा

अक्टूबर 2022

वर्ष -21

अंक-22

(केवल आतंरिक वितरण हेतु)

इस अंक में

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
	हमारी बातें—अनुराधा पांडे, अल्मोड़ा	1
1	**जंगलों से घिरा गाँव**—शान्ति रावत, ग्राम सुरना, जिला अल्मोड़ा	10
2	**खेती में जंगली जानवरों का प्रकोप**—शिवानी, ग्राम बधाणी, जिला चमोली	12
3	**बंदरों के झुंड गाँवों में ठहर जाते हैं**—गिरीश चन्द्र जोशी, ग्राम मौनी, जिला अल्मोड़ा	15
4	**प्रशासन सुनता है पर कार्यवाही नहीं**—आशा आर्या, ग्राम बानठौक, जिला अल्मोड़ा	17
5	**स्वयं से प्रेम करें**—चन्द्रा आर्या, जिला अल्मोड़ा	19
6	**जंगली जानवरों से परेशान हैं किसान**—राजेन्द्र सिंह बिष्ट, जिला पिथौरागढ़	24
7	**स्वाभिमान बढ़ा है**—ईशा बेरी, ग्राम किमतोला, जिला पिथौरागढ़	26
8	**मेरा गाँव नामिक**—माला, ग्राम नामिक, जिला पिथौरागढ़	27
9	**गाँव को जोड़ता है ग्राम शिक्षण केन्द**—मनीषा महरा, ग्राम फडियाली, जिला पिथौरागढ़	28
10	**शिक्षा का पुल**—गंगा कन्यारी, ग्राम नामिक, जिला पिथौरागढ़	29
11	**कम्प्यूटर शिक्षण**—गौतम पंवार, ग्राम बछेर, गोपेश्वर, जिला चमोली	31
12	**घेरबाड़ से फसल**—बची पायल बिष्ट, ग्राम कोटेश्वर, गोपेश्वर, जिला चमोली	32
13	**आजीविका पर असर**—रेनू आर्या, ग्राम कसून, जिला अल्मोड़ा	33
14	**किशोरी संगठन**—मनीषा बोरा, ग्राम भन्याणी, जिला पिथौरागढ़	35
15	**संकट में घिरा जीवन**—रितु आर्या, ग्राम मनीआगर, जिला अल्मोड़ा	36
16	**सही दिशा मिली**—विभा गहतोड़ी, ग्राम तोली, पाटी, जिला चम्पावत	38
17	**जंगली जानवरों को भगाने के लिये उपाय**—प्रियंका आर्या, ग्राम पल्यूँ, जिला अल्मोड़ा	39
18	**समय अमूल्य है**—कौशल्या रौतेला, ग्राम गोगिना, जिला बागेश्वर	40
19	**कम्प्यूटर केन्द**—रिया रावत, ग्राम जनकाण्डे, पाटी, जिला चम्पावत	41
20	**लोग खेती छोड़ रहे**—करिश्मा सगोई, ग्राम सुन्दरगाँव, जिला चमोली	43
21	**भारतीय हूँ—गर्व है**—पवन सिंह मेहता, ग्राम रातिर, शामा, जिला बागेश्वर	44
22	**गुलदार पालतू पशुओं पर हमला कर रहे**—रचना नेगी, ग्राम जाख, जिला चमोली	45
23	**बच्चों के साथ स्वयं आगे बढ़ो**—रेनू बोहरा, ग्राम मल्ला कमलेख, पाटी, जिला चम्पावत	47
24	**ग्रामीणों की सोच**—विनोद कुमार, ग्राम खोला, जिला अल्मोड़ा	48
25	**किसान महिलाओं की मेहनत बेकार जा रही**—साक्षी बिष्ट, ग्राम मण्डल, जिला चमोली	50

26 **खाना बनाना पसंद है**—लक्ष्मण कुमार, ग्राम नामिक/गोगिना, जिला बागेश्वर 52
27 **रात में जानवर भगाने खेतों में जा रहे**—अनामिका, ग्राम पुडियाणी, जिला चमोली 53
28 **बंदरों को भगाने के लिये बारी लगायी**—मीनाक्षी नेगी, ग्राम चौण्डली, जिला चमोली 55
29 **मेरा केन्द्र**—गायत्री कैड़ा, ग्राम बिन्ता, जिला अल्मोड़ा 56
30 **ग्राम शिक्षण केन्द्र**—पुष्पा बिष्ट, ग्राम गोड़गाँव, जिला अल्मोड़ा 57
31 **कोविड—19 और प्रवासी**—केदार सिंह कोरंगा, शामा, जिला बागेश्वर 58
32 **ग्रामवासी जंगली जानवरों को भगा रहे**—रेखा रावत, ग्राम चौण्डली, जिला चमोली 60
33 **फसलों की विविधता में कमी**—सुमन नेगी, गोपेश्वर, जिला चमोली 62
34 **सिलाई**—सुनीता, ग्राम नामिक, जिला पिथौरागढ़ 64
35 **कृषि कम, दुग्ध उत्पादन पर ध्यान**—मानसी बिष्ट, ग्राम कठूड़, गोपेश्वर, जिला चमोली 66
36 **जंगली जानवरों से परेशानी**—नीता बिष्ट, ग्राम ग्वाड़, गोपेश्वर, जिला चमोली 67
37 **जंगली जानवरों पर ग्रामीणों की सोच**—प्रेमा रावत, ग्राम बणद्वारा, जिला चमोली 69
38 **कृषि से लाभ नहीं मिल रहा**—स्मिता बिष्ट, ग्राम सिरोली, गोपेश्वर, जिला चमोली 70
39 **दालें बोना कम कर दिया**—पूनम रावत, ग्राम काण्डई, गोपेश्वर, जिला चमोली 71
40 **महिला संगठन**—माया जोशी, ग्राम बिन्ता, जिला अल्मोड़ा 72
41 **कब मिलेगी जंगली जानवरों से निजात**—हंसी डसीला, ग्राम रूंगड़ी, जिला पिथौरागढ़ 73

हमारी बातें

पिछले दो–तीन दशकों में उत्तराखण्ड में मनुष्य और प्रकृति के बीच द्वैत भाव बड़ा होता चला गया है। जंगल, मिट्टी, पेड़, हवा, पानी, सूर्य–चन्द्रमा की ऊर्जा और बदलते मौसमों के प्रति सहज उल्लास एवं इसमें आत्मसात् हो जाने की इच्छा छीज रही है। एक अजीब सा विरोधाभास छाया हुआ है।

पहाड़ी गाँवों में रहने वाले लोग, खासकर महिलाएं, निरंतर शिकायत कर रही हैं, विरोध जता रही हैं। जंगली जानवरों के अतिक्रमण से खेती–पाती चौपट हुई जाती है। महिलाएं दिन भर खेतों में काम करती हैं। रात को जंगली सुअरों के झुंड आकर खेतों और फसलों को बर्बाद कर देते हैं। दिन में बंदर फसलें उजाड़ते रहे तो मेहनत करने का कोई लाभ है क्या? माँ और सासें अपनी बेटी, बहू से सहमत होते हुए कह रही हैं कि वे शहर/कस्बे में किराये का कमरा ले कर रहें। बच्चे पढ़ेंगे तो कुछ कमाने लायक बनेंगे। गाँव में क्या रखा है? दूसरी ओर सत्ता पर काबिज हुक्मरान, वैज्ञानिक, जंगल–जानवरों के विशेषज्ञ आदि लगातार समझा रहे हैं कि जंगली जानवरों के साथ रहना सीखो। प्राणिमात्र को जीने का अधिकार है। जंगली पशुओं से टकराव के बावजूद उनके साथ रहो। इस संदर्भ में आजकल एक शब्द प्रचलन में है–कोइक्सिस्ट–अर्थात् साथ–साथ होना या रहना। क्या है इस शब्द का सैद्धान्तिक और व्यवहारिक पक्ष?

साथ–साथ रहने का सिद्धान्त भला किसे अच्छा नहीं लगेगा? उत्तराखण्ड में तो लोग सदियों से वनस्पति और जानवरों के साथ रहते आये हैं, सहजता के साथ। आज इस सहज भाव में क्रोध, हताशा और बेबसी के लक्षण अकारण ही नहीं आ रहे। विशेषज्ञों की बातें सिर्फ जंगली जानवरों के साथ रहने की नहीं हैं बल्कि यूँ कहना चाहिये कि हिंसक हो रहे, खेती तथा मानव जीवन को हानि पहुँचा रहे जानवरों के साथ रहने की हैं। कौन माँ–पिता होंगे जो उस तेंदुए पर क्रोध न करें जो उनकी आँखों के सामने घर के आंगन से छोटे बच्चे को उठा ले गया। कौन होगा जो भालू के हमले से चोटिल होकर महीनों तक अस्पताल के चक्कर लगाते हुए उस घड़ी को न कोसता हो जब जानवर से आमना–सामना हुआ। भालू के घर की पहली मंजिल पर आ जाने से चमोली जिले में हमारे एक परिचित डर कर नीचे कूद पड़े। पैरों की हड्डियाँ टूट गयीं। नौकरी छूट गयी। महीनों बिस्तर पर पड़े

रहे। उनसे जंगली जानवरों के संरक्षण की बात कोई कैसे कहेगा? बंदरों और जंगली सुअरों के झुंड के झुंड खेतों में खड़ी फसल को बर्बाद करें तो कौन किसान निर्लिप्त बना रहेगा?

जंगली जानवरों के साथ रहने का व्यावहारिक पक्ष कठिन है। खासकर जब पहाड़ के गाँवों में लोग अत्यंत सीमित संसाधनों के बीच गुजर–बसर करते हैं।

प्रकृति के साथ रहने का दूसरा पक्ष भी है। प्रकृति के होने से मनुष्य में उदारवादी गुण आते हैं। प्रकृति जितना बाहर रहती है उतना ही भीतर भी हमारी चेतना को पोसती है। इससे अभिन्न, एकात्म हो कर मनुष्य ऊर्जा पाता है, सुख भी। कैसा होता है जंगली जानवरों के बीच एकात्म हो कर जीना? इसी बिंदु पर अनुभवजनित चर्चा कर रही हूँ।

हमारा बचपन एक बगीचे में गुजरा। बाँज, बुरांश, काफल, उतीस, बमौर और एक बड़े हिस्से में चीड़ के पेड़ों से आच्छादित जंगल के बीच बने इस बगीचे में लाल टिन की छत वाला बड़ा सा घर और उससे लगा हुआ एक छोटा घर, यह निगलाट था। हम भाई बहन पढ़ने के लिये रोज भवाली जाते। लगभग दो मील चलकर स्कूल पहुँचते। लगभग डेढ़ मील का रास्ता घने जंगल के बीच से गुजरता। इस खूबसूरत लेकिन सुनसान रास्ते में हमारे परिजनों के अतिरिक्त कभी–कभार ही लोग आते–जाते थे। एक तरह से यह रास्ता हमारा 'अपना' था। वन विभाग के स्वामित्व के बावजूद कई बार पिताजी नेपाली मजदूर लगा कर इसे साफ कराते, मरम्मत भी करवाते, सहज भाव से। इस रास्ते में 'हमारेपन' की छटा थी।

इस खूबसूरत पैदल मार्ग में पानी के तीन बड़े स्रोत थे। बगीचे के नजदीक एक सुन्दर झरना था। इसका पानी रास्ते के बीच से गुजरता हुआ नीचे को बहता। उसके बाद एक बड़ा गधेरा आता। पिताजी ने उसके ऊपर बड़े–बड़े समतल पत्थर डलवा दिये थे। इन्हीं पत्थरों पर हम रोज चलते–दौड़ते, गधेरे को पार करते। तीसरा गधेरा चौड़ा तो था पर रास्ते में पानी अपेक्षाकृत कम आता। रास्ते से पच्चीस–तीस मीटर ऊपर इस गधेरे में पानी की एक टंकी बनी थी। इस टंकी से जी.बी.पंत इंटर कॉलेज को पानी जाता। गर्मी के मौसम में स्कूल से लौटते वक्त कभी–कभी हम भाई–बहन

टंकी के पानी से प्यास बुझाते, बाँज के घने पेड़ों की छांव में ठंडे पत्थरों पर बैठकर सुस्ताते और फिर घर पहुँचते।

हम दशकों तक इस जंगल से लगभग रोज ही आते–जाते रहे। जंगल के पेड़, रास्ते का हर मोड़ जाना–पहचाना था। बमौर की धार से बगीचा दिखायी देता। बजरी खान से लोग बजरी लेते। नवाब की धार से एक रास्ता ऊपर को जाता, लोग वहाँ पर लाल मिट्टी लेने आते। चुंगी की धार से नीचे गाड़ी की सड़क दिखायी देती। सड़क में बैरियर लगा था। वाहनों से चुंगी वसूली जाती।

बदलते मौसम के साथ रास्ते का रंग–रूप बदलता। हवा की खुशबू बदलती। हमारे बचपन से किशोर और फिर युवा होने का साक्षी है यह मार्ग। स्कूल में दिन भर हुई घटनाओं को सुनता, खुशी और दुःख की घड़ियों में संभालता, समेटता और संबल देता। हमारी जीवन दृष्टि को बनाता और पोषित करता रहा है यह रास्ता।

बचपन में एक बार स्कूल से आ रहे थे। तभी रास्ते पर पड़ा हुआ एक बहुत लंबा साँप दिखायी दिया। अब उस पार कैसे जायें? भाई फुसफुसाया, हिलना मत। झपट कर काट लेगा। हम बुत बने खड़े रहे, बहुत देर तक। साँप टस से मस न हुआ। वह आराम से पड़ा हुआ धूप सेंक रहा था। बाल–बुद्धि ने सुझाया कि शायद ताली बजाने से भागेगा। कोई असर न हुआ। स्वयं हिलने में हम डरें कि कहीं पीछा कर के काट न ले। आपस में फुसफुसाते हुए तय किया कि दौड़ कर रास्ते से ऊपर चढ़ना सही होगा। साँप चढ़ाई में तेजी से सरक नहीं पायेगा और हमारे दौड़ने की पूरी संभावना रहेगी। ऊपर चढ़ कर एक पत्थर लुढ़काया। कोई असर नहीं। फिर एक बड़ा सा पत्थर लुढ़काया और साँप रास्ते से नीचे की ओर सरक गया। इस पूरी घटना में आधा घंटे का समय लग गया। जंगल और जानवरों के बीच रहने में धैर्य और प्रत्युपन्नमति बराबर के साझीदार रहे हैं।

बड़े गधेरे के समीप कुछ खेत जैसे बने हुए दिखायी देते थे। अक्सर हम बातें करते कि किसने ये खेत बनाये होंगे? क्यों इस जगह को छोड़ कर अन्यत्र चले गये? जाड़ों में पहाड़ों से तराई–भाबर की ओर जाने वाली भेड़ों के झुंड यहाँ पर बसेरा करते। सफेद–काली भेड़ों से जंगल भर जाता। मैं–मैं की आवाज करती हुई भेड़ें जल्दी–जल्दी घास चरतीं। बड़े–बड़े कुत्ते और

खच्चर साथ में रहते। हम बच्चे बड़े समतल पत्थरों पर बैठ जाते। कौतुहल से भरे हुए आपस में बहस करते। अनुमान लगाते कि कब अनवाल (या मर्चवाण/पालसी–गढ़वाल में प्रयोग होने वाले शब्द) अपने विशेष अंदाज में सीटी मारेंगे और इधर–उधर बिखरी हुई भेड़ें फिर से झुंड में वापस आ जायेंगी।

अनवाल हमें बताते कि उनके कुत्ते बाघ, गुलदार से लड़ जाते हैं, भालू से भी। उनकी गद्रन में लोहे के नोक वाले पट्टे बंधे होते। इस तरह से वे बाघ/गुलदार के झपट्टे से बचे रहते। अनवाल हर साल आते और पूछते, ''बाघ तो नहीं लगा है आजकल?'' जवाब न में हो तो निश्चिंत हो कर अपनी गुदड़ी फैला लेते और धूप सेंकते। मैली गुदड़ी और छोटी–बड़ी पोटलियों में एक संसार बसता। सूखा माँस, घी, भेड़ की खाल, जड़ी–बूटियाँ, जंगलों से लिये गये सूखे फल, अखरोट, आटा–चावल, आलू, खाना बनाने के बर्तन, आग जलाने के लिये डॉसी पत्थर और भी न जाने क्या–क्या। एक अलौकिक गंध हवा में फैल जाती।

शरद् ऋतु में ही सड़कों में बैलगाड़ियाँ भी दिखायी देने लगती। टुन–टुन की आवाज करती घंटियाँ, बैलों के खुरों की खुट–खुट और पहियों की चर्र–चर्र ध्वनि से दूर से ही पता लग जाता कि लोग पहाड़ से भाबर की ओर जाने लगे हैं। अक्सर बैलगाड़ियों के पीछे पैदल चलते वयस्क स्त्री–पुरूष बछिया या छोटे कुत्तों को गोद में उठाये हुए चलते। कभी बैलगाड़ी में सामान के ऊपर बच्चे, कुत्ते, बिल्ली सभी साथ बैठे होते।

ठंड का मौसम शुरू होते ही बगीचे के ऊपर से 'V' के आकार में पक्षियों के झुंड उड़ते। ये वे पक्षी थे जो हर वर्ष ठंडे देशों, खासकर साइबेरिया, से पलायन कर के भारत पहुँचते। जाड़ों में ब्लू मैगपाई (लमपुछड़ी) हिमालयन थ्रश, वेज टेल्ड ग्रीन पिजन (हरा कबूतर) मिनिवेट, पैरिडेई परिवार के टिट (जिसे हम बर्फ की चिड़िया कहते), वौर्बलर, बुशचैट आदि तरह–तरह की चिड़ियाँ घर के आसपास आ जातीं और दाना खाती। दिन भर कलरव करते इन पक्षियों में अपनी जगह को लेकर लड़ाइयाँ होतीं। जैसे–कलचुनि (व्हीसलिंग थ्रश) अपनी जगह को ले कर बड़ी सतर्क रहती। अन्य पक्षियों को भगाने में घंटो लगाती। चतुराई ऐसी कि बाँज या उल्लू के आने पर तुरंत छोटे आकार के पक्षियों के झुंड के साथ मिल जाती। सभी मिल कर एकजुट होते और चीख–चीख कर आसमान सिर पर उठा लेते। शिकारी पक्षियों को

भगा कर ही दम लेते। इन पक्षियों के व्यवहार से पता चलता कि ये सिर्फ एक झुंड नहीं है, एक तंत्र है। स्वयं की रक्षा के लिये तत्पर! जरूरत पड़ने पर एकजुट हो कर मुसीबतों का सामना करती चिड़ियाँ हमें सीख ही तो देती थीं।

जंगल में हम मीलों घूमते। पहाड़ की ढलानों पर ऊपर–नीचे दौड़ते फिरते। एक बार शाम को जंगल में घास चरने के लिये गयी गायें वापस नहीं लौटी। देर होती देख माँ को चिंता हुई। गायों की देखभाल करने वाले लच्छदा से कहा गायें नहीं लौटी अभी तक। हम बच्चे उत्साहित। कहा कि अभी ढूँढ़ लाते हैं और जंगल की तरफ दौड़ पड़े। झरने के पास पहुँचे तो ऊपर झाड़ी में कुछ आवाज सी हुई। जरा ऊपर चढ़कर देखा तो सामने गुलदार दिखायी दिया। कुछ ही मीटर की दूरी पर बैठा हुआ वह हमें देख रहा था। पिताजी की बतायी सीख याद आ गयी। उन्होंने बताया था जंगली जानवरों से आँखें मत मिलाओ। उस जगह से हट जाओ। गुलदार को देख कर डर नहीं लगा। हम चमत्कृत थे। भव्य शरीर, लंबी पूँछ, पीली आँखें। वह शान से उठा, अंगड़ाई ली और जिस ओर हम खड़े थे उसकी विपरीत दिशा में चला गया। हवा में उसकी गंध बसी रही।

जंगलों में यूँ ही भटकते वक्त हम रास्ते या पगडण्डियों पर ज्यादा ध्यान नहीं देते थे। कहीं न कहीं कोई राह मिल ही जाती। जंगल से एकात्म हो कर चलते। कहीं फर्न, कहीं मास और लाइकेन देखते। जंगल में पशु–पक्षियों, कीड़े–मकोड़ों, वनस्पति, मिट्टी–पानी का अपना संसार चलता। उस संसार का हिस्सा हो जाते। इसी एकात्म भाव से हम अपने रहने के स्थान को जानने–समझने के दायरे बनाते रहते। जंगल में घूमते तो अपनी जिंदगी के कुछ पल उस अलौकिक जीवन के साथ बिताते जो हमारे चारों ओर बिखरा हुआ था। प्रकृति भौतिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक रूप से पोषित करती रहती, एक ऐसी दृष्टि देती जिससे हम वह देख और समझ पाते थे जो रोजमर्रा की भागदौड़ में छूट जाता है। इस प्रकार जंगल, बगीचा, जानवर, सूरज, पानी और हवा मिल कर हमारी जीवन दृष्टि को परिष्कृत करते रहे।

एक बार रात के वक्त माँ–पिता ने ध्रुव तारा दिखाया। बताया कि वही उत्तर दिशा है। बस एक नया खेल मिल गया। शर्त लगती कि जो सबसे पहले ध्रुव तारा ढूँढ़ लेगा वह जीतेगा। धीरे–धीरे शुक्र, मंगल ग्रह, तारामंडल

आदि पहचानने लगे। सप्तऋषि देखना सब से आसान लगता। फिर एक रात आकाश गंगा देखी। अनगिनत तारों की एक चौड़ी पट्टी देख कर आश्चर्यचकित हो गये।

रात को बगीचे में क्रिकेट्स लगातार बोलते, जुगनू उड़ते, उल्लू की हू–हू की आवाजें सुनाई देती। फ्लाइंग फॉक्स एक पेड़ से दूसरे पेड़ में कूदती तो किर्र–किर्र की आवाज आती। बरसात के मौसम में टोड टर्र–टर्र करते। बगीचे में सीमेंट की दो बड़ी टंकियाँ थी। इन टंकियों में कमल के फूल और मछलियाँ (गोल्डन फिश) रखे थे। बरसात में टोड के लार्वा निकलते, हजारों टेडपोल टंकियों की दीवारों से चिपक जाते। काला रंग, गोल शरीर और पतली पूँछ वाले टेडपोल को देखने के लिये हम टंकी की मुंडेरों पर बैठे रहते। अंजुलि में भर कर उन्हें बाहर निकालते और खेलते। इसी तरह टंकियों में मछलियों के अंडे भी देखे। पानी में तैरती मछलियों को झपटने के लिये नीलकंठ पक्षी गोता मारता। मछलियाँ भी उतनी ही फुर्ती से घप्प करती हुई पानी के भीतर छिप जातीं।

बसंत ऋतु के आते ही घर के बाहर बड़े से लॉन में मुलायम घास पनपने लगती। सुबह पाँच–छः बजे जंगली खरगोश आ धमकते। रोबिन और डल्लू जोर–जोर से भौंकते तो हम बच्चे बिस्तर से बाहर निकलकर खिड़कियों के शीशों में उनींदी आँखें लगा देते। खेतों को जागते हुए देखते। लॉन में घास खा रहे बड़े–बड़े भूरे और सफेद रंग के जंगली खरगोश बहुत प्यारे लगते। वे अपने लंबे कानों को हिलाते हुए मखमली घास के ऊपर लोटने लगते। कुत्तों की पूरी कोशिश रहती कि उन्हें मार कर निवाला बना लें परंतु खरगोश हाथ नहीं आते थे। वे कूदते–फाँदते बहुत तेजी से दौड़ते और रोबिन, डल्लू कहीं पीछे छूट जाते।

बगीचे में बंदर कभी नहीं देखे। लंगूर आते और आड़ू, खुबानी, प्लम और सेब की टहनियों को तोड़ देते। परंतु वे भी बगीचे के किनारे उन्हीं पेड़ों पर आते जो जंगल से सटे थे। बगीचे के बीच में कभी नहीं आये।

दशकों के बाद आज जब उत्तराखण्ड के लगभग हर घर–गाँव से जंगली पशुओं के द्वारा किये जा रहे नुकसान के विषय में सुना, समझा और देखा तो निराशा हुई। जंगली जानवरों के साथ जो बचपन बीता वहाँ कौतुहल और प्रकृति से प्रेम के भाव प्रभावी रहे। अब उत्तराखण्ड के गाँवों में बंदरों और

सुअरों के ऐसे झुंड दिखायी देते हैं जो आनन–फानन में फसलों को तहस–नहस कर रहे हैं। काकड़, चिथरौव, सरोगाय, घुरल का खेतों में आना–जाना लगा हुआ है। जंगली जानवर ग्रामवासियों के लिये समस्या बने हुए हैं। महिलाएं दिन भर खेतों में मेहनत करती हैं। फसल तैयार होते ही जंगली पशु चट कर जाते हैं। फसलों के साथ–साथ सब्जियों, फलों का उत्पादन घटा है। आलू, पिनालु, गडेरी, मक्का, मटर, टमाटर सभी प्रकार की सब्जियाँ जंगली जानवर बर्बाद कर रहे हैं। ग्रामवासी क्या करें?

जंगली पशुओं के घरों तक आ जाने से मनुष्यों और जानवरों के बीच का भावनात्मक लगाव छीज रहा है। पहाड़ी गाँवों में पहले से ही जंगलों का घनापन, गुफा–उड़यार लोगों को सुरक्षा देते रहे हैं। ऐसी अनेक घटनाएं पहाड़वासियों ने देखी और सुनी हैं, जब घास–लकड़ी लेने गयी स्त्रियाँ अचानक नदी में पानी बढ़ जाने से रात भर नदी–पार जंगल में ही रूक जाती थीं। बुग्यालों में जाने वाले अनवाल हर साल गर्मियों भर वहीं रहते आये हैं। जनमानस के बीच ऐसे अनेक किस्से कहे–सुने जाते हैं जब घर में झगड़ा हो जाने पर बहू भाग कर उड्यारों में छिप जाती। कई दिनों तक वहीं रहती। जंगल सुरक्षा देता और संबल भी।

अब ये संदर्भ बदल रहे हैं। गाँव के आसपास उग आयी कुरी, काला बाँसा और अन्य झाड़ियों के बीच जंगली सुअरों के छिपे होने का भय किस ग्रामवासी को नहीं होता? शाम होते–होते अभिभावक बच्चों और पालतु पशुओं को घर के भीतर ले आते हैं। क्या पता आसपास छिपा तेंदुआ कब हमला कर दे। बावजूद इस सावधानी के, तेंदुए घरों के आंगन, दरवाजों से ही छोटे–छोटे बच्चों, कुत्ते, बछिया–बकरी को उठा ले जा रहे हैं। हाथी खेतों की बर्बादी के साथ–साथ लोगों की झोपड़ियों–दीवारों को ढ़हा रहे हैं।

जंगली जानवरों के अतिक्रमण ने गाँव ही नहीं कस्बों और शहरों को भी प्रभावित किया है। बंदरों के झुंड छतों पर कूदते–फाँदते चलते हैं। उन के चलने से पटाल की छतों से पत्थर खिसकते हैं तो टिन की छतों में कीलें ढ़ीली हुई जाती हैं। हर साल मानसून आते–आते लोग छतों की मरम्मत में जुटे रहते हैं अन्यथा बारिश का पानी दीवार को खराब करता चला जायेगा। बंदरों और आवारा कुत्तों द्वारा काटे जाने के सैकड़ों मामले हर माह अस्पतालों के रजिस्टरों में दर्ज हैं।

इन सभी कारणों से जनमानस में एक प्रकार की खलबली मची हुई है। हनुमान मान कर पूज्य समझे गये बंदरों के प्रति भारतीय समाज में अहिंसा का भाव रहा है। जंगली पशुओं के आतंक के कारण अहिंसा को हिंसा में बदलते देर नहीं लगी। गुलेल, पत्थर, लकड़ी जो हाथ में आये उससे उपद्रवी बंदरों की खबर लेना जन–चेतना का हिस्सा बना है। एक ग्रामीण स्त्री ने क्रोधित हो कर कहा, ''ये सुग्रीव नहीं, बाली हैं। इनका कुछ इंतजाम तो करना होगा।'' सांस्कृतिक मूल्यों में इस बिखराव का कारण यही है कि लोग क्रोधित हैं, हताश और बेबस हैं।

बौद्धिक चर्चाओं में मनुष्यों के अधिकारों के साथ–साथ जानवरों–पक्षियों या यूँ कहें कि प्राणिमात्र के अधिकारों की बातें हो रही हैं। प्राणिमात्र के जीने का अधिकार तो ग्रामवासी पहले भी समझते थे। यह समझ मुख्यतः धर्म, लोकाचार और नैतिक मूल्यों से जुड़ी हुई थी। प्राणियों को किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाना पाप समझा गया। अब यह बहस विस्तार पा रही है। वन्यजीव संरक्षण अधिनियम–1972 के तहत कई जीव–जंतु संरक्षित घोषित हुए। कानून के दृष्टिकोण ने सही–गलत का दायरा बहुत बढ़ा दिया है। ग्रामवासी क्या करें? शासन–प्रशासन ने जंगली सुअर को वर्मिन घोषित किया परंतु इससे जुड़ी प्रक्रिया इतनी जटिल बना दी कि कुछ लाभ नहीं हो रहा। यह प्रक्रिया जरा भी व्यावहारिक नहीं है। बंदूक और गोली का इंतजाम, शिकारी की व्यवस्था, पशु–चिकित्सक से सर्टिफिकेट लेना और उस पर तुर्रा यह कि जानवर नाप जमीन में होना चाहिए, यह सब आसान है क्या?

इस कारण, ग्रामवासी हाथ जोड़ कर कह देते हैं, छोड़ो, कौन पड़े इस पचड़े में? आज जन–समाज में कोई जोखिम न उठाने की जो मनोवृत्ति छायी है उसका तोड़ क्या है? फिर भी समाज के भीतर कुछ गिने–चुने लोग हैं जो लगातार आवाज उठा रहे हैं। इनमें उत्तराखण्ड महिला परिषद् से जुड़े अनेक स्वैच्छिक संगठन और महिला संगठन भी हैं जो लगातार पंचायतों की गोष्ठियों में जंगली जानवरों के आतंक से निजात दिलाने की मांग कर रहे हैं। विधायकों, सांसदों को मांग–पत्र दे रहे हैं। वनाधिकारियों से अपील कर रहे हैं। अल्मोड़ा में आयोजित संवाद कार्यशाला 2014 में यह मुद्दा जोर–शोर से उठाया गया। राज्य सरकार तक संस्तुतियाँ भेजी गयी। वन विभाग के राज्य प्रमुख, सांसदों और विधायकों से ग्रामीण महिलाओं ने स्वयं बातचीत की। उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान देश और प्रदेश

की राजधानियों में नीतियाँ बना रहे जन–प्रतिनिधियों, विशेषज्ञों तक पहाड़ की यह समस्या पहुँचाता रहा है। बहस–चर्चा, सेमीनार–उत्सवों में जंगली जानवरों के अतिक्रमण का मुद्दा बार–बार उठ रहा है। फिर भी द्वंद्व बना हुआ है।

नंदा के इस अंक में कुमाऊँ और गढ़वाल के गाँवों में रह रही युवतियों, युवकों एवं कुछ महिलाओं ने जंगली जानवरों के अतिक्रमण से संबंधित अनुभव लिखे हैं। कुछ गाँवों में लोग जंगली जानवरों के भय से रात को बाहर नहीं निकलते। लोग चिंतित हैं और लाचारी से भरे हुए हैं। बंदरों के झुंड कई दिनों तक गाँव में ठहर जाते हैं। गेहूँ–धान की बाली हो या कद्दू–ककड़ी की बेल, पुष्प–फल हो या मिट्टी के भीतर छिपे आलू, गडेरी–पिनालू सभी जंगली सुअर और बंदर के बुद्धिबल के समक्ष औंधे पड़े हैं। उस ग्रामीण स्त्री के शब्द पहाड़ों में गूंजते हैं, ''ये बाली हैं या सुग्रीव?'' इसी द्वंद्व के साथ द्वैत भाव बढ़ा है जिससे ग्रामीण समाज में बेचैनी है, बदलती संवेदनाओं का मंथन है।

आशा है नंदा का यह अंक उत्तराखण्डवासियों, खासकर ग्रामीणों, को इस समस्या के बीच से एक नया रास्ता निकालने की ताकत देगा। एक ऐसा जीवनपरक रास्ता मिलेगा जैसा निगलाट गाँव में हम बच्चों को पोषित करते हुए जीवनदृष्टि को व्यापक बनाने में सक्षम हुआ।

इस अंक में इतना ही।

अनुराधा पांडे

जंगलों से घिरा गाँव

शान्ति रावत

मेरे सुरना गाँव, जिला अल्मोड़ा, के चारों ओर ऊँचे–ऊँचे पर्वत हैं। गाँव के सामने एक बहुत ऊँचा पहाड़ है जो भटकोट नाम से जाना जाता है। उस पहाड़ के ऊपर शिवजी का एक मंदिर है। गर्मी के मौसम में लोग पैदल यात्रा करके जंगल के रास्ते से मंदिर में जाते हैं। उसी पहाड़ के बायीं ओर पाण्डुखोली का पहाड़ है। लोग पैदल यात्रा करके भटकोट के रास्ते पाण्डुखोली का मंदिर और गुफा देखने के लिए भी जाते हैं। कहा जाता है कि पाण्डुखोली में संजीवनी बूटी मिलती है। यहाँ से हिमालय की चोटियाँ दिखायी देती हैं। वहाँ जो भी लोग जाते हैं औषधियाँ लेकर आते हैं। यहाँ की जड़ी–बूटियाँ कई प्रकार की बीमारियों को दूर करती हैं।

पाण्डुखोली से पैदल–मार्ग में आगे चलकर दुनागिरी का मंदिर आता है। दुनागिरी के नीचे हमारा गाँव स्थित है। हमारा गाँव जंगलों के बीच में बसा हुआ है। यहाँ से बिन्ता पाँच किमी की दूरी पर है। राजकीय इण्टर कॉलेज भी पाँच किमी की दूरी पर है। हमारे गाँव के बच्चे पैदल रास्ते से ही स्कूल जाते हैं। गाँव में प्राथमिक पाठशाला ही है। हमारे गाँव में लगभग चौदह–पन्द्रह हेक्टेयर जमीन होगी जो तीन भागों में विभाजित की जा सकती है।

सिंचाई वाली जमीन–हमारे गाँव में सिंचाई वाली जमीन लगभग चार–पाँच हेक्टेयर होगी। इस भूमि में रोपाई करते है। रोपाई आषाढ़ माह में होती है। रोपाई में आदमी और औरतें मिलकर काम करते हैं। आदमी हल लगाते हैं। पानी में साणं, दनयाव से मिट्टी को बराबर करते हैं और महिलाएं रोपाई करती हैं। रोपाई के धान उपराऊँ के धान की उपज से कई गुना अधिक होते हैं।

उपराऊँ जमीन–उपराऊँ जमीन में चैत के महीने में ही धान की फसल बो देते हैं। भाद्रपद के महीने में धान पक जाते हैं। उपराऊँ जमीन एक बार में खाली रहती है। एक ऋतु में गेहूँ होते हैं। एक बार धान होते हैं तो एक बार भट्ट और मडुवा होता है।

बंजर जमीन–बंजर जमीन से ग्रामवासी गाय, भैंसों के लिए घास लाते हैं। अश्विन (असोज) के महीने में घास को काट लेते हैं एवं सुखा कर गाय, भैंसों के लिए लूटे लगाते हैं। बंजर भूमि से हमें घास और झाड़ियाँ प्राप्त होती हैं। इस कारण यह जमीन बंजर भी नहीं है।

हमारे गाँव में लगभग दो सौ पचास परिवार रहते हैं। ये ग्राम सभा सुरना के अन्तर्गत आते हैं। गाँव में अधिकतर महिलाएं कृषि का कार्य करती हैं। गाँव से पलायन कम मात्रा में है। पहले लोग सब्जी बेचकर अपनी आमदनी से ही घर चलाते थे। गडेरी, पिनालू, आलू, प्याज, लहसुन, मटर आदि होता था। अखरोट भी होते थे। मिर्च तो बड़े–बड़े खेतों में लगाते थे। अब दस–पन्द्रह सालों से गडेरी, आलू आदि जंगली सुअर खा जाते हैं। प्याज, लहसुन, मटर, लौकी, ककड़ी सब बन्दर खा जाते हैं। मिर्च भी लगाते हैं तो उसे सौल खा जाता है। वह पेड़ों को बड़ा नहीं होने देता। हमारे क्षेत्र में धान की इतनी अच्छी फसल होती है पर अब रात को जंगली सुअर आकर सब तहस–नहस कर देते हैं।

सुरना गाँव में पहले इतने अखरोट होते थे कि लोग बाजार में जाकर बेचते थे। अब पकने से पहले ही बन्दर अखरोट खा लेते हैं, बाकी गिरा जाते हैं। अब लोगों ने हल्दी और अदरक लगाना शुरू कर दिया है। हमारे गाँव में लोग जल–जंगल–जमीन से जुड़े हैं। महिलाएं व पुरूष दोनों मिलकर काम करते हैं। कुछ लोगों ने मुर्गियाँ भी पाल रखी हैं। ग्रामवासियों ने प्राइवेट डेयरी में दूध की बिक्री की है। डेयरी में गाँव के बहुत से परिवार दूध देते हैं। हर दिन पचास से साठ लीटर दूध बिकता है और सीधे बग्वाली–पोखर की बाजार में जाता है। हमारे गाँव के लोग आटा पनचक्की का ही खाते हैं। वहाँ पिसाई में पैसा न देकर आटा ही लिया जाता है। डीजल चक्की के आटा से यह कई गुना पौष्टिक होता है।

सुरना जंगलों से घिरा हुआ गाँव है। यहाँ तेंदुआ, जंगली सुअर, लंगूर, बन्दर, सौल, कांकड़ व कभी–कभी भालू भी आ जाता है। तेंदुआ दिन–दहाड़े आ जाता है। वह गाय–बैलों पर हमला करता है। ग्रामवासियों ने बन्दर–सुअर से छुटकारा पाने के लिए शासन, प्रशासन को प्रस्ताव भी भेजे पर वहाँ किसी ने लोगों की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया है। हमने कई बार विधायकों को भी माँग–पत्र सौंपा है पर कोई निर्णय नहीं हुआ। बंदरों को भगाने के लिए दो–दो महिला करके बारी लगाते हैं। कुछ घरों से पुरूष और बच्चे भी आते हैं। जंगली सुअरों को भगाने के लिए आदमी रात को खेतों में जाते हैं। अब जब से तेंदुआ आया है लोग रात को बाहर कम निकलते हैं। जैसे पहले घट (पनचक्की) में रात को अनाज पिसाने जाते थे पर अब जंगली जानवरों के भय से नहीं जाते।

खेती में जंगली जानवरों का प्रकोप

शिवानी

मेरे गाँव का नाम बधाणी है। यह गाँव कर्णप्रयाग विकास खंड, जिला चमोली, में स्थित है। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग पच्चीस एकड़ होगी। बधाणी में पिचासी परिवार निवास कर रहे हैं। फसलों में धान, गेहूँ, कोदा, झंगोरा, जौ, चौलाई और दलहनी फसलों में गहत, उड़द, सोयाबीन, तोर, मसूर, लोबिया इत्यादि उगायी जाती थी लेकिन पहले की अपेक्षा अब ये फसलें कम बोई जाती हैं। फसलों के कम बोये जाने का प्रमुख कारण यही है कि पहले जंगली जानवर जैसे सुअर, बंदर, लंगूर, इत्यादि वनों में ही रहते थे किंतु अब ये गाँवों में देखे जाते हैं। ये सभी जानवर गाँव के आस–पास खेती की जमीन को नुकसान पहुँचाते हैं।

पहले से कद्दू, लौकी, तोरई, प्याज, टमाटर, आलू, चिचिंडा, बैंगन, भिंडी इत्यादि लगभग सभी प्रकार की सब्जियों को उगाया जाता था। इसी प्रकार फलों में आड़ू, नाशपाती, चुई, माल्टा, दाड़िम इत्यादि फलों की पैदावार होती थी किंतु अब जंगली जानवरों के प्रकोप के कारण ये सभी फल कम होते जा रहे हैं। फसलों, फलों और सब्जियों के कम होने का मुख्य कारण यह भी है कि बेरोजगारी बढ़ने के कारण लोग गाँव से रोजगार के लिए पलायन कर रहे हैं। फलस्वरूप उनकी खेती की जमीनें बंजर होती जा रही हैं।

पहले की अपेक्षा फसलों में अब मुख्यतः गेहूँ, धान और जौ ही उगाए जा रहे हैं। फलस्वरूप उपराऊँ के कुछ खेत बंजर हो गये हैं। ग्रामवासियों ने मंडुआ, झंगोरा, चौलाई इत्यादि फसलों को बोना कम कर दिया है। दलहनी फसलों में तोर, मसूर, लोबिया, सोयाबीन इत्यादि फसलों को बोना छोड़ दिया है। सब्जियों में मुख्यतः कद्दू, ककड़ी मिर्च, भिंडी और करेला ही बोया जाता है। इन के अलावा अन्य सभी सब्जियों को कम बोया जाता है। पहले की अपेक्षा अब गाँव में माल्टा, नींबू, नाशपाती व कहीं–कहीं आम व अंगूर दिखाई देते हैं। अन्य प्रकार के फल कम होते जा रहे हैं।

कृषि के अलावा गाँव में कुछ महिलाएं सिलाई करके आजीविका के साधन जुटा रही हैं। कुछ लोग दुकानों में काम करते हैं। गाँव के युवा छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त कई लोग लॉकडाउन खुलने के बाद पुनः गाँव से बाहर जाकर फैक्ट्री इत्यादि में काम करके आजीविका का साधन अपना

रहे हैं। गाँव के कुछ लोग रोजगार के नए स्रोतों में मुर्गी–पालन, खच्चर पालना, पॉलीहाउस बनाकर सब्जी उगाना आदि गतिविधियों द्वारा आजीविका कमा रहे हैं। महिलाएं प्रशिक्षण लेकर गाँव में लोगों के कपड़े सिल रही हैं। वे समूह में अचार, पापड़ बनाना भी सीख रही हैं। महिलाएं ऊनी वस्त्रों को बुनकर बेचती हैं और आजीविका चलाती हैं। कुछ महिलाएं घास, लकड़ी बेचकर भी धन अर्जित करती हैं।

जंगली जानवरों के लिए शासन, प्रशासन के सख्त नियम और कड़े कानून हैं। इसके अनुरूप जंगली जानवरों को कानूनी सुरक्षा दी गई है। वाइल्ड–लाइफ एक्ट के तहत किसी भी प्रकार से जंगली जानवरों को नुकसान पहुँचाना दण्डनीय अपराध है। जंगली जानवरों को पकड़ना, फंसाना, जहर देना अपराध की श्रेणी में आता है। गाँव में जंगली जानवरों को कोई नुकसान नहीं पहुँचाया जाता। सिर्फ उन्हें गाँव से बाहर भगाया जाता है। ग्रामवासी अपने स्तर पर जंगली जानवरों को भगाने के लिए प्रयास करते हैं। गाँव के आसपास खेती की जमीनों को भालू, जंगली सुअर, बंदर और लंगूर लगातार नुकसान पहुँचाते हैं। फसल पकने के समय ग्रामवासी बैठक करके प्रतिदिन कुछ लोगों को खेतों में रखवाली के लिए भेजते हैं। गाँव के सभी परिवारों से एक–एक सदस्य को चौकीदारी के लिए जाना पड़ता है। जिससे जंगली जानवरों द्वारा फसलों को नुकसान न पहुँचे। समय–समय पर निगरानी रखने के अलावा फसलों के बचाव हेतु खेतों में पुतले बनाए जाते हैं।

कुछ पुराने उपायों में जंगली सुअरों से खेतों को बचाने के लिए रास्ते के किनारे बाल काट कर फेंक दिए जाते थे। जब जंगली सुअरों के झुंड

सूंघते–सूंघते खेतों में आते हैं तो बाल उनकी नाक में चले जाते हैं। इस वजह से सुअर खेतों में कम आते थे।

हमारे गाँव के आस–पास गुलदार, भालू जैसे बड़े जानवरों को देखा गया है किंतु अभी तक उन्होंने किसी मनुष्य को नुकसान नहीं पहुँचाया है। कभी–कभी गुलदार घर से बाहर रह गए पालतू कुत्तों पर हमला कर देता है। एक साल पहले गुलदार ने गाँव में दो कुत्तों को मारा था। पालतू कुत्तों की वजह से अक्सर रात में गुलदार घरों के नजदीक आ जाते हैं। गुलदार गाँव की गौशालाओं के आस–पास भी दिखायी देता है। डर के कारण ग्रामवासी रात को अकेले बाहर नहीं निकलते हैं। गुलदार हमला न करे इसलिए रात को घर के बाहर उजाला ही रखा जाता है।

जंगली जानवरों के कारण अन्य परेशानी भी होती है। कुछ जानवर जैसे जंगली सुअर फसलों के बीचों–बीच भूमि पर गढ्ढ़े बना देते हैं। इससे फसलों की जड़ों को नुकसान पहुँचता है। लंगूर फलों और सब्जियों के साथ–साथ पत्तियों को भी तोड़–मरोड़ देते हैं। पेड़ों की शाखाएं तोड़ देते हैं। बंदर घरों के अंदर तक आ जाते हैं व औरतों–बच्चों पर झपटने लगते हैं। जंगली जानवरों के कारण ग्रामीणों को ये समस्याएं हो रही हैं।

इन समस्याओं के निदान के तरीके आसान नहीं हैं। हमारे देश में पशु–प्रेमी जनता बहुतायत में है। वे सभी जानवरों के प्रति प्रेम दर्शाने की बातें कहते हैं। गाँवों में जंगली पशुओं से हो रहे नुकसान के प्रति वे संवेदनशील नहीं हैं। वे कहते हैं कि जानवरों को भी जीने का हक है। कानून में भी यही कहा गया है कि हर एक जानवर, कीट–पतंगा, पक्षी आदि जीने का अधिकार रखता है। मनुष्यों को हो रही परेशानियों, खासकर ग्रामीणों, को होने वाली कठिनाइयों पर किसी का ध्यान नहीं है। उत्तराखण्ड में ग्रामवासी जंगली पशुओं से अत्यधिक परेशान हैं और खेती बंजर हो रही है। इस वजह से लोग गाँवों से बाहर पलायन कर रहे हैं। इस समस्या का कोई हल निकलना चाहिये।

बंदरों के झुंड गाँवों में ठहर जाते हैं

गिरीश चन्द्र जोशी

वर्तमान में मौनी गाँव में लगभग चार सौ नाली जमीन है और तीस परिवार रहते हैं। गाँव में अधिकतर बाँज और चीड़ के जंगल हैं। पहले गाँव में अनेक प्रकार की फसलें लगाते थे। सब्जी का भी खूब उत्पादन होता था। आलू, गोभी, प्याज, लहसुन की खूब पैदावार होती थी। फसलों में मुख्य रूप से मडुआ, मादिरा, धान, गेहूँ, मक्का आदि का अच्छा उत्पादन होता था।

अब जंगली जानवरों के आतंक से खेतों में कुछ खास पैदावार नहीं है। बंदरों के झुंड तो पहले भी आते थे। ग्रामवासियों द्वारा हो–हल्ला करने से कुछ ही समय में भाग जाते थे। वर्तमान समय में बंदरों के झुंड कई दिनों तक गाँव में ही ठहर जाते हैं। पहले बन्दरों के आश्रय के लिए गाँव और आस–पास के इलाके में ऊँचे पेड़ कम थे। बंदर टिक नहीं पाते थे। पहले से ईंधन की कमी थी। लोग अपने खेतों से काँटे, झाड़ियाँ इत्यादि को काट कर साफ करते रहते थे क्योंकि जलाने के लिये लकड़ी की जरूरत थी। इस तरह खेतों की सफाई भी हो जाती और लोगों की जरूरतें भी पूरी होती थीं। आजकल गाँवों में गैस आ गयी है। इस कारण ईंधन लकड़ी की खपत कम हो गयी है।

वर्तमान समय में जंगली सुअरों और बंदरों के डर से लोगों ने कई फसलें लगाना छोड़ दिया है। दो–चार सालों से तो फसल शून्य के बराबर है क्योंकि अन्त में कुछ नहीं मिला तो फिर मेहनत करने का मन भी नहीं होता। जंगली सुअरों के कारण अब गाँवों में जमीन धीरे–धीरे बंजर हो रही है। कृषि नाम मात्र की है। कृषि में उत्पादन नहीं हो रहा है। इस कारण लोग मजदूरी करके परिवार का खर्च उठा रहे हैं।

आज के समय में पुरूषों और महिलाओं के लिए कृषि–आधारित आजीविका चलाने के लिए कोई साधन नहीं है। अगर खेती करते हैं तो बंदर और जंगली सुअर खत्म कर देते हैं। अगर जानवर पालते हैं तो गुलदार जानवरों को मार देता है। अब लोग घर में ही एक–दो जानवर पालते हैं। पालतु पशुओं को जंगल में चरने के लिये भेजें भी तो कैसे? घात लगा कर बैठे हुए गुलदार पालतु पशुओं को मार रहे हैं।

जंगली जानवरों के लिए शासन–प्रशासन का कोई भी स्पष्ट दृष्टिकोण नहीं है। खाली आश्वासन देकर जनता को चुप करा देते हैं। ज्यादा जनता कर भी

क्या सकती है? ग्रामवासी अपने स्तर से रात में हो–हल्ला करके थोड़ा–बहुत खेतों को बचा पाते हैं। इससे अगले साल के लिए कुछ बीज बच जाता है। हमने पिछले साल मडुआ, मादिरा बोया। हल चलाया और फिर दनियाला लगाया, गुड़ाई–निराई की, बहुत बढ़िया फसल हो रही थी। अंत में जब फसल तैयार हुई तो जंगली सुअरों ने रौंद कर खराब कर दी। और तो और घास भी जानवरों के खाने लायक नहीं रही। अब इस साल बीज खरीद कर बोया है।

ग्रामवासी रात के समय जंगली सुअर और गुलदार के भय से बाहर नहीं आते हैं। गाँव के आस–पास गुलदार ने कई पशु मार दिये हैं। अब तो हमने गुलदार द्वारा मारे गये पशुओं की गिनती करना भी छोड़ दिया है। साथ ही, लोगों ने जानवरों को पालना भी कम कर दिया है। जंगली सुअरों ने मनुष्यों पर भी हमला बोला है। नजदीक के एक गाँव में गुलदार ने दो साल पहले एक आदमी की जान ले ली। इसके अतिरिक्त सुअरों ने एक महिला को घायल कर दिया। गाँवों में जंगली जानवरों के कारण ही परेशानी हो रही है। सबसे ज्यादा परेशानी जंगली सुअरों के कारण हो गयी है।

पहले तो लोग जंगली सुअरों को पहचानते तक नहीं थे। उस समय खूब खेती और अच्छी सब्जी होती थी। अब वर्तमान समय में जंगली सुअरों के झुंड खेतों में देखे जाते हैं। कभी–कभी दिन की रोशनी में ही सुअर दिखायी दे जाते हैं। अगर जंगली जंगली सुअर खेतों में नहीं आते तो ग्रामवासी कुछ हद तक फसलें लगाकर अनाज और सब्जी उत्पादन करके अपनी आजीविका चला सकते थे। आज उत्तराखण्ड में गाँव के गाँव खाली होने का एक मुख्य कारण जंगली जानवरों का अतिक्रमण है।

प्रशासन सुनता है पर कार्यवाही नहीं

आशा आर्या

मेरे गाँव का नाम बानठौक है। यह जिला अल्मोड़ा में स्थित है। गाँव में कुल परिवारों की संख्या पचास है। बानठौक गाँव में बाँज, चीड़, काफल आदि के पेड़ हैं। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग पाँच सौ नाली होगी। गाँव में पहले से धान, मडुआ, मादिरा, गेहूँ की खेती अधिक होती थी। अब बंदर, जंगली सुअर के कारण लोग फसलें लगाना छोड़ रहे हैं। हमारे गाँव में पहले से आलू, प्याज, लहसुन, टमाटर, पालक आदि खेतों में लगाया करते थे पर अब कम सब्जी लगाते हैं। अब जंगली सुअर, बंदर, लंगूर के आतंक के कारण सब्जियाँ लगाना कम हो गया है। जो खेत घरों के आस–पास हैं वहीं पर सब्जियाँ उगाते हैं। अब इन खेतों में भी कम सब्जियाँ होती हैं। सभी ग्रामवासियों को बाजार से खरीदना पड़ता है। जंगली जानवरों के कारण लोग परेशान हैं।

हमारे गाँव के महिला संगठन ने मासिक गोष्ठी में सब्जी उत्पादन के लिए उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान से पॉली–हाउस लगाने की बात की। उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान अल्मोड़ा के सहयोग से गाँव में पॉली–हाउस बने। वर्तमान में हमारे गाँव में बाइस पॉली–हाउस हैं। पॉली–हाउस के अंदर सब्जी का अच्छा उत्पादन हो रहा है। सब्जियाँ जंगली जानवरों से सुरक्षित भी रहती हैं।

हमारे गाँव में आज तक जंगली जानवरों ने कोई पशु नहीं मारे हैं। गाँव में गुलदार का कोई खतरा नहीं है। लोग रात को बाहर आने से भी नहीं डरते हैं। हमारे गाँव में किसी भी चीज का कोई खतरा नहीं है।

बंदरों से तो सभी लोग परेशान हैं। बंदर ग्रामवासियों की फसलों को बर्बाद कर रहे हैं। इस कारण सभी ग्रामवासी परेशान रहते हैं। गाँव में अधिकतर लोग कृषि से अपने परिवारों को पालते हैं। कृषि करके उनका अपना रोजगार बन जाता है। गाँव में परेशानी भी होती है। कृषि करने में लोग मेहनत भी करते हैं परन्तु उस का लाभ नहीं मिल पा रहा।

जब से हमारे गाँव में सड़क आयी है तब से लोगों ने दुकानें खोल ली हैं। कोई चाय–पानी की दुकान चला रहा है, कोई कपड़े सिल रहा है। इस कारण लोगों को ज्यादा कठिनाइयाँ नहीं हो रही हैं। गाँव में महिलाओं का संगठन सक्रिय है। पाँच–छः महिलाएं कपड़े सिल कर अपना रोजगार चला रही हैं। हमारे गाँव में आज भी बहुत फल होते हैं। अमरूद, अनार, केले, नाशपाती, नींबू, संतरा आदि फल आज भी हमारे गाँव में होते हैं परन्तु जंगली जानवरों की समस्या बनी रहती है। जंगली पशुओं से सुरक्षा के लिए प्रशासन का कोई स्पष्ट दृष्टिकोण नहीं है। प्रशासन के प्रतिनिधि हम ग्रामवासियों की बातें सुन तो लेते हैं पर कोई भी कार्यवाही नहीं होती।

स्वयं से प्रेम करें

चन्द्रा आर्या

हम सोचते हैं कि दूसरे लोग हमारे लिये परेशानियाँ खड़ी कर रहे हैं। जब जीवन हमारा अपना है तो दूसरे लोग परेशानी कैसे खड़ी कर सकते हैं? मैं ऐसा इसलिए समझती हूँ कि जीवन में चाहे कैसी भी परिस्थिति हो हमारे पास दो विकल्प तो होते ही हैं। हम जो विकल्प चुनें, वह हमारे ऊपर है, वही हमारी सच्चाई है। महत्वपूर्ण बात यह है कि हम स्वयं के प्रति कितने सच्चे हैं। जब तक हम स्वयं के लिये सच्चे न हों तब तक कुछ कर नहीं पायेंगे। जब कुछ कर नहीं सकते तो शिकायत करना भी गलत है। शिकायत करने से हमारा समय व्यर्थ जाता है, चिंता बढ़ती है। हर वक्त हम कुछ न कुछ सोचते रहते हैं। इस का सीधा प्रभाव हमारे शरीर और दिमाग पर पड़ता है। इसका असर एकदम दिखायी नहीं देता अपितु उम्र बढ़ने के साथ–साथ महसूस होता है। किसी ने सच ही कहा है, ''सुख के सब साथी, दुःख में न कोई।'' सुख बाँटने के लिए लोग पास आते हैं लेकिन जब दुख आये तो दूर जाना पसंद करते हैं।

जिन्दगी में आगे बढ़ना है तो कुछ बातें ध्यान रहें। अपने व्यक्तित्व को पहचानें और फिर कोई कार्य करें। अपने आप से प्रेम करें। जब तक खुद से प्रेम करना नहीं सीखोगे, तब तक दूसरा भी तुम्हें प्रेम नहीं कर पायेगा। सकारात्मक सोच के साथ मुस्करा कर हर आने वाली परेशानी का सामना करें। परेशानी अपने आप दूर चली जाती है। स्वस्थ रहें, खुद पर विश्वास रखें। यह सबसे महत्वपूर्ण है कि अपने आप से बेहद प्रेम करें। जब आप ये बातें अपना लेंगे, यकीन मानें, तब कोई आपको आगे बढ़ने से नहीं रोक सकता।

मैं पैदायशी एक दुबली लड़की हूँ। छोटी थी तो बाहर लोगों से इतना सुनने को नहीं मिलता था कि क्या हो गया है? कुछ खाती क्यों नहीं? थोड़ा माँस हम से ले लो (सेहत मंद लोगों का कहना) आदि। तब जिन्दगी बेहतरीन थी। कक्षा दस की बोर्ड की परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई। फिर छुट्टियों के बाद कक्षा ग्यारह में गयी तो साथ पढ़ रहे बच्चों में परिवर्तन दिखाई दिया। जैसे–लड़कों की लम्बाई बढ़ना, सेहतमंद नजर आना, भारी आवाज आदि। लड़कियों में भी बदलाव दिखायी दिये, लेकिन मैं वैसी की वैसी। थोड़ा बहुत बदलाव हुआ था। मेरे नजरिये से वह ठीक था लेकिन अन्य लोगों के अनुसार उपयुक्त था अथवा नहीं, इसका पता चलना बाकी था। ऐसा सवाल मेरे दिमाग में कभी आया भी नहीं। मेरा मानना था कि मैं सुंदर हूँ। खुद से प्यार करती हूँ। मैं खुद को

जानती हूँ। संभवतः ये सभी बातें गलत होने वाली थी, मुझे पता नहीं था। मैं हमेशा की तरह विद्यालय जाने लगी लेकिन पता नहीं क्यों अब खुद को बदलने की कोशिश करने लगी थी। जो मेरे विचारों के एकदम विपरीत जा रहा था।

खुद को अलग तरीके से पेश करना, स्कूल की चाहरदीवारी तक मुझे प्रशंसा देता था। घर आते ही सोचती थी कि ऐसा क्यों कर रही हूँ, जब मैं खुश नहीं हूँ। लड़के कहते थे कुछ खा लिया कर, मोटी हो जा, तब ज्यादा अच्छी लगेगी। यह सब सुनकर दुःख होता। इस वजह से नहीं कि अगर किसी ने ऐसा बोला तो मैं वैसी कब बनूँगी। गुस्सा आता था कि अगर किसी ने ऐसा बोला तो मैं जवाब क्यों नहीं दे पायी। अगर ये दिमाग में तब आ गया होता तो शायद जिन्दगी बेहतर हो जाती। मैं मजबूत हो जाती।

गाँव जाओ तो हर कोई कहता ''थोड़ी मोटी हो जा'' (हेल्दी नहीं)! पूरी तरह से दुःखी हो कर मैं गुस्से से भर जाती थी। किसी से कह नहीं पाती थी क्योंकि मैं मानती थी कि जो जैसा करता है, कहता है, उसकी अपनी दिक्कत है। मैं क्यों किसी को बुरा महसूस कराऊँ। हमेशा बोलने वाली, हँसते रहने वाली लड़की अब गुमसुम सी रहने लगी। गुस्सा इतना भरा होता था कि खुद को अजीब नजरों से देखना शुरू कर दिया। परिवार में दादी, मौसी, चाची सभी यही कहते कि मोटी हो जा, शादी कैसे होगी इत्यादि। धीरे–धीरे सभी से बातें करना बंद कर दिया। जवाब देना नहीं आता था। सोचती थी क्या ही होगा मेरे कहने से, क्यों बोलूँ? स्कूल से निकली और फिर कॉलेज जा पहुँची। सोचने लगी कि अब पता नहीं कॉलेज में कैसे लोग होंगे।

कॉलेज जाती और चुपचाप एक किनारे बैठ जाती थी। गुस्सा रहना, बिना सोचे समझे कुछ भी करना, फैसले लेना आदि जीवन का हिस्सा बन गये। ज्यादा दोस्त नहीं बनाये। इस डर से कि पता नहीं कौन क्या कह देगा। घर से कॉलेज, कॉलेज से घर, एकांत में रहना शुरू कर दिया। अपनी आदतों को बदलना शुरू कर दिया। जैसी मैं हूँ उसके एकदम उलट। मन कुछ कहता परंतु दिमाग कुछ और सोचने लगता था।

उस वक्त बाहर जाकर पढ़ाई करना ही मेरा एकमात्र सपना बन गया। सोचा शायद घर से बाहर जाऊँगी तो थोड़ा परिवर्तन आयेगा शरीर में। आस–पड़ोस के लोग कहते कि देखो अमुक का लड़का या लड़की बाहर जाकर ठीक हो गये। अल्मोड़ा में स्नातक करने के बाद आगे पढ़ाई के लिये बाहर

चली गई। कॉलेज का जीवन सामान्य लगा क्योंकि कभी अच्छा महसूस नही किया। जब पढ़ाई के लिये बाहर जाने लगी तो सोचा कुछ अलग होगा। खुश थी। सोचती थी एक दिन जरूर जवाब दूँगी उन सब लोगों को, जब मोटी और सुंदर हो जाऊँगी। यह पता नहीं था कि ऐसा दिन मुझे स्वयं ही लाना पड़ेगा।

नयी कक्षा में पन्द्रह विद्यार्थी थे। पहले दिन सब से मिली। सभी काफी अच्छे थे, बातें करने से अच्छा लगा। छात्रावास में जा कर भी लगा कि यहाँ सब ठीक है। मैं अपनी खुशी को दूसरों में ढूँढ़ती थी। यदि कोई मेरी तारीफ करता तो मानो दिन बन जाता। अगर किसी ने कुछ कहा और मुझे लगा कि मेरे लिये कहा जा रहा है तो पूरा दिन खराब हो जाता। रात भर यही सोचती रहती थी। पढ़ाई नहीं हो पा रही थी, न ही मैं मोटी हो रही थी। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ, क्या नहीं। घर से दूर पढ़ने के लिये आयी थी, पैसा खर्च हो रहा था। ये सब जानते हुए भी पढ़ाई में मन नहीं लगता था। पहली बार की परीक्षा में बैक लग गई। सब के सामने जाने में डर लगने लगा। लोग क्या कहेंगे? मेरे साथी और अध्यापक क्या कहेंगे? कुछ लोगों ने मुझे समझा और कुछ उल्टी बातें सुनाने लगे। दोस्तों की नजर में मैंने खुद को उत्तीर्ण मान लिया था। इससे थोड़ा अच्छा लग रहा था।

कक्षा शुरू हुई। प्रोफेसर ने उपस्थिति लेनी शुरू की। हमेश हर किसी को लेकर अच्छा सोचने वाली लड़की मन ही मन कॉलेज अच्छा है, सब अच्छा है, सोच रही थी। जब उपस्थिति में नाम आया तो मैं खड़ी हुई। प्रोफेसर ने मुझे देखा और हँसे, ''तुम स्नातकोत्तर में आई हो क्या?'' मैंने सहमति में सर हिला दिया। उन्होंने कहा, तुम तो लग ही नहीं रही हो। इतनी दुबली–पतली हो? कुछ खाती नहीं हो? हॉस्टल में खाना कैसा मिल रहा है? इस विषय में बहुत काम करना पड़ता है, कैसे करोगी? उनके इतने सवाल और मेरा जवाब यही था कि काम कर लूँगी। अब सेहत बना लूँगी। फिर पढ़ाई शुरू हो गयी। वह क्या पढ़ा रहे, क्या बोल रहे थे, मुझे कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। उनके पूछे हुए सवाल और हँसी मेरे मन–मस्तिष्क में गूँज रही थी। सोच रही थी कि कक्षा खत्म होते ही मेरे साथ में पढ़ रहे छात्र–छात्राएं क्या कहेंगे? मैं क्या कहूँगी? यही सोचते–सोचते कक्षा का समय खत्म हो गया। सब सामान्य था। जैसा मैं सोच रही थी, वैसा कुछ नहीं हुआ। दिन आगे बढ़ता रहा। यही सोचती रही कि क्या खाऊँ कि थोड़ी मोटी हो जाऊँ। किसी ने कहा चावल खाओ, किसी ने दूध, अण्डा खाने की सलाह दी। मैं कभी रात को चावल नहीं खाती थी पर अब

गर्मी हो या सर्दी चावल खाना शुरू कर दिया। गर्मी में तो अच्छा लगता था लेकिन ठंड के मौसम में भी चावल खाने लगी। प्रोफेसर कहते, कमजोर हो, खाना नहीं खाती। कैसे थीसिस का काम करोगी इत्यादि। ऐसा करने से मोटापा तो आया नहीं, तबियत बिगड़ने लगी। फिर मैंने चावल खाना छोड़ दिया। एक बात समझ में आयी कि तारीफें दिन बनाती है और ताने जिंदगी।

ऐसा सोचते–समझते तीन साल पूरे होने को आये। थीसिस का काम शुरू हो गया। भाग–दौड़, प्रयोगशाला में पूरे दिन काम करना, रिपोर्ट बनाना आदि कार्य चलते रहते। सुबह से रात कब हुई पता ही नहीं चलता था। खाना कभी छात्रावास में खाने जाती तो कभी प्रयोगशाला में ही मंगवा लेती।

फिर एक दिन कुछ ऐसा हुआ जिससे मेरी सोच स्पष्ट हो गयी। कक्षा में सेमिनार होने वाला था। इसमें पास होना जरूरी होता है। हॉस्टल में अलग–अलग विभागों के छात्र–छात्राएं रहते थे। सभी को सेमिनार में भाग लेना था। छात्र–छात्राएं तैयारी करने के बावजूद डरे हुए थे। लड़कियों ने खाना तक छोड़ दिया। हॉस्टल में सन्नाटा पसरा रहता। लड़कियाँ किसी से बात करना तो दूर अपने कमरे से बाहर निकलना बंद कर देतीं। अगल–बगल के कमरों में रहने वाली लड़कियाँ भी आपस में बात नहीं करती थीं। उनके चेहरे की हँसी गायब हो गई। मैं ही थी जो रोज सुबह–शाम दोनों वक्त खाना खाती, हँसती, सब को अभिवादन करती। एक दिन ऐसा हुआ कि किसी सहपाठी को मैंने हँसते हुए अभिवादन किया। उसने मुझे देखा और बोली, ''तुम्हारा सेमिनार हो गया?'' मैंने कहा, ''नहीं अगले हफ्ते है।'' वह बोली, ''तुम तो किसी बात का टेंशन नहीं लेती।'' मैं सोचने लगी क्या परीक्षा के भय से हम हँसना, बोलना छोड़ दें? मैंने कहा, ''अभी तो एक हफ्ता है। अभी से क्यों परेशान होना।'' वह बोली, ''तुम्हारा सही है चन्द्रा,'' हँसी और चली गई।

उस दिन एक बात तो समझ में आई कि चाहे जिन्दगी में आप खुश हो या दुखी, दोनों ही परिस्थितियों में लोग सवाल जरूर करेंगे। इसलिये स्वयं को संभालना आना चाहिये। हर गलत चीज, डर और दुख से दूर रहने का एकमात्र मूल मंत्र है चेहरे पर मुस्कुराहट रखो। कभी किसी दिक्कत में आये तो हमारा सकारात्मक रूख ही ताकत देगा और कोई नहीं। किसी से अपेक्षा रखना अपने आप में बहुत बड़ी गलती है।

एक हफ्ते बाद सेमिनार हुआ। अच्छा रहा। जिस ने जो सवाल पूछे मैंने सभी का जवाब दिया। मुझे तिरासी अंक मिले। छात्रावास में लड़कियाँ हैरान हो गयीं। तब स्वयं को महत्व देने का भाव मेरे अंदर आने लगा। जब हम खुद को महत्व देना शुरू करते हैं तो हमारे भीतर स्थायी परिवर्तन आते हैं। ये बदलाव हमारी जिन्दगी को अच्छे मुकाम पर ले जाते हैं।

मैंने स्वयं को एक बेहतर जिन्दगी देने का वादा किया है। एक अच्छी जगह पहुँच कर जरूरतमंदों की मदद करूँ। यह सोच है, जो मुझे रूकने नहीं देती। एक अन्य घटना याद आ रही है। पढ़ाई पूरी होने के बाद कॉलेज में एक साक्षात्कार देने गई। सोचा कुछ लोगों को जानती–पहचानती हूँ, अच्छा ही होगा। साक्षात्कार लेने वाले महोदय ने पूछा काम कैसे करोगी। कृषि का काम आसान नहीं होता इत्यादि। मेरा चयन नहीं हुआ। वैसे अब जिंदगी अच्छी बीत रही है। अनुभवों से सीख कर मैं जीना सीख गई।

हमारा प्रयास केवल खुद को खुश रखने का होना चाहिए। बाकी दुनिया क्या सोचती है, समझती है, वो दुनिया जाने। जिन्दगी कैसी हो यह हम पर निर्भर करता है। जिन्दगी हमारी है तो उसे जीने की शर्तें भी हमारी होनी चाहिये। खुश रहें या दुखी, यह हमारी मर्जी है। जैसा कि मैंने शुरूआत में लिखा, ''इन्सान के पास हर परिस्थिति के दो विकल्प होते ही हैं। हम क्या चुनते हैं, यह हमारे ऊपर है।''

मैं यह नहीं कहती कि समझदार हो गई हूँ। बस यह कहती हूँ कि अब लोगों की बातों का बुरा नहीं लगता। मैंने चीजों को देखने और अपने सोचने का तरीका बदल लिया है।

जंगली जानवरों से परेशान हैं किसान

राजेन्द्र सिंह बिष्ट

आँकड़ों की मानें तो उत्तराखण्ड की सत्तर प्रतिशत आबादी खेती पर निर्भर है। जिस तरह खेती योग्य भूमि का उपयोग भवन–निर्माण और अन्य जरूरतों के लिये बढ़ा है, वह चिन्ता बढ़ाने वाला है। जो खेती के योग्य भूमि है, उसके प्रति भी लोगों का जुड़ाव धीरे–धीरे कम हो रहा है। इस कारण खेती–योग्य भूमि बंजर हो रही है। इसके अनेक कारण हैं। उनमें सबसे प्रमुख वजह जंगली जानवरों द्वारा फसलों को नुकसान पहुँचाना है। आज उत्तराखण्ड का कोई भी क्षेत्र जंगली जानवरों के नुकसान से अछूता नहीं है।

एक ओर किसानों के पास खेती की भूमि सीमित है। वहीं दूसरी ओर मौसम में आ रहे बदलाओं के चलते किसान सूखे व अतिवृष्टि से परेशान हैं। जो थोड़ा उत्पादन होता भी है उसे जंगली जानवर नष्ट कर देते हैं। इस कारण कई गाँवों में लोगों ने खेती करना कम कर दिया है।

गणाई–गंगोली क्षेत्र के गाँव भी जंगली जानवरों के अतिक्रमण से अछूते नहीं हैं। यह पिथौरागढ़ जिले में गंगोलीहाट विकास खण्ड का एक दूरस्थ क्षेत्र है। यह इलाका बागेश्वर से आने वाली सरयू नदी से लगा हुआ है और कमोबेश गर्म घाटी का क्षेत्र है। गाँवों में मुख्यतः धान, गेहूँ, मडुआ, मसूर, उड़द, सोयाबीन, गहत आदि उगाया जाता है। सब्जी में आलू, गडेरी, लौकी, कद्दू, गोभी आदि का उत्पादन किया जाता है। लोग सब्जी का उत्पादन सीमित मात्रा में ही करते हैं। इस क्षेत्र में भी बंदर, जंगली सुअर और साही द्वारा सब्जियों को बहुत नुकसान पहुँचाया जाता है। इस वजह से लोगों ने स्वयं के उपयोग हेतु भी सब्जी का उत्पादन करना छोड़ दिया है।

गाँवों में बंदरों का आतंक बहुत ज्यादा है। बंदर झुण्ड में आकर फसलों को बर्बाद कर जाते हैं। पहले बंदरों की पहुँच घरों तक नहीं थी। जंगलों से लगे हुए खेतों तक कभी–कभार आ जाते थे, भगाने पर भाग भी जाते थे। अब गाँवों के आस–पास ही रहते हैं। लोग अपने खाने लायक सब्जियों का भी उत्पादन नहीं कर पा रहे। बंदरों का बच्चों पर झपटना आम बात हो गई है।

जंगली सुअरों का आतंक भी बढ़ गया है। ये रात में आकर पूरी फसल और खेत को तहस–नहस कर जाते हैं। गाँवों में ज्यादातर लोगों के खेत घरों से दूर हैं। इस कारण हर वक्त बंदर, जंगली सुअरों से फसल की सुरक्षा कर पाना

संभव नहीं है। इस वजह से खेती के प्रति लोगों का रूझान कम हो रहा है। गाँवों में उन कृषक परिवारों के लिए बहुत बड़ी समस्या खड़ी हो गयी है जो सिर्फ खेती पर निर्भर हैं।

लोग स्वयं जंगली जानवरों से फसल को बचाने का प्रयास तो करते हैं लेकिन ये कोशिशें नाकाफी हैं। सरकार की ओर से इस दिशा में क्या प्रयास किये जा रहे हैं? धरातल पर कहीं कुछ नजर नहीं आता है। पिछले कई वर्षों से बंदरों की रोकथाम के लिए बंदर–बाड़े बनाने, उनकी जनसंख्या का नियंत्रण एवं घेरबाड़ जैसी योजनाएं जोरों पर रही। इनका कितना लाभ लोगों को मिल पाया, कोई नहीं जानता। सरकार की ओर से किसानों को लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से उत्तराखण्ड के कई क्षेत्रों में परम्परागत कृषि को बढ़ावा देने के लिए योजनाएं चलाई जा रही हैं। इसके तहत फसलों के क्लस्टर तैयार करके जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रश्न रह जाता है कि इन फसलों की सुरक्षा कैसे हो?

कई क्षेत्रों में जंगली जानवरों से फसलों को बचाने के लिये लोगों ने अन्य तरीके इजाद किये गये हैं। इसमें से कुछ तरीके थोड़े कारगर भी साबित हो रहे हैं। गाँवों में इन उपायों की जानकारी देने की जरूरत है। जंगलों में फलदार पेड़ों का रोपण करना भी एक उपाय हो सकता है ताकि जानवरों को वहीं पर पर्याप्त मात्रा में खाने को मिल सके।

आजकल गाँवों में कूड़ा–निस्तारण के लिए पिट बनाये गये है। इसमें बिना किसी समझ के सभी तरह का कूड़ा एक साथ डाल दिया जाता है। जैविक और अजैविक दोनों तरह का कूड़ा एक ही पिट में डम्प कर दिया जाता है। बंदर वहाँ तक आ रहे हैं। साथ ही, जहाँ–तहाँ कूड़ा भी फैला रहे हैं। इसके लिए लोगों को भी समझदारी दिखानी होगी।

जिस गति से जंगली जानवरों का गाँवों की ओर आना बढ़ रहा है उससे खेत बंजर हो रहे हैं। इस समस्या के निवारण के लिए सरकार व समुदाय की ओर से कोई ठोस हल नहीं निकाला गया तो आने वाले समय में गाँव भुखमरी की ओर बढ़ेंगे। अनाज व फलों की कई ऐसी प्रजातियाँ लुप्त हो जायेंगी जो किसी क्षेत्र–विशेष में ही पाई जाती है। गाँवों से पलायन बढ़ेगा। साथ ही, कृषि योग्य भूमि का उपयोग गैर–कृषि कार्यों के लिए होने लगेगा।

स्वाभिमान बढ़ा है

ईशा बेरी

मेरा जन्म–स्थान किमतोला गाँव, गंगोलीहाट ब्लाक, जिला पिथौरागढ़ है। परिवार में माँ–बाप, तीन बहनें और एक भाई है। सभी भाई–बहन पढ़ाई कर रहे हैं। पिता जी खेती और माँ घर का काम करती है। खेती और जंगल का काम परिवार के सभी लोग मिलकर करते हैं। पालतू पशुओं में एक बैल, एक छोटी भैंस और तीन बकरियाँ हैं।

मैं पढ़ाई करने के साथ–साथ शिक्षण केन्द्र चलाती हूँ। मैंने आठवीं तक नैनी–धपना और उसके बाद पिलखी के स्कूल में पढ़ा। वर्तमान में गणाई गंगोली महाविद्यालय में स्नातक स्तर में अध्ययनरत हूँ। मुझे सभी विषय अच्छे लगते हैं लेकिन अंग्रेजी कम समझ में आती है।

कोविड–19 लॉकडाउन के समय मेरी दिनचर्या बिल्कूल सादी रही। मैं सुबह उठकर झाड़ू लगाती, बर्तन धोती, खेतों में जाती और वापस आकर खाना पकाती थी। खाना खाने के बाद थोड़ी देर सो जाती और फिर खेतों में जाती थी। वापस आकर चाय बनाती। सब्जी काटती। शाम को पढ़ाई करती और खाना खाकर सो जाती थी। मेरा मन पढ़ाई के बाद जॉब करने का है।

हमारे गाँव में शिक्षण केन्द्र 2020 में शुरू हुआ। मैं पहली संचालिका बनी। मैं ट्रेनिंग के लिये अल्मोड़ा गयी। वहाँ मुझे बहुत अच्छा लगा। प्रशिक्षण लेने के बाद केन्द्र का संचालन शुरू किया।

हमारा केन्द्र एक निजी मकान के छोटे से कमरे में चलता है। केन्द्र के बाहर जगह कम होने के कारण मैं बच्चों को खेलने के लिये खाली खेतों में ले जाती हूँ। शिक्षण केन्द्र में बैडमिंटन, चैस आदि खेल–सामग्री है। बच्चे चित्रकारी, खेल और कहानी सुनने में सबसे ज्यादा रुचि लेते हैं।

जब से गाँव में शिक्षण–केन्द्र खुला है, बच्चे शाम के समय इधर–उधर नहीं घूमते। माता–पिता भी उन्हें खुशी से केन्द्र में भेजते हैं। कभी–कभी अभिभावक स्वयं भी केन्द्र में आते हैं। केन्द्र में काम करने से मुझे भी बहुत कुछ सीखने को मिला। मन में लगन और आत्म–विश्वास पैदा हुआ। पहले कुछ काम करने या बोलने में हिचकिचाहट महसूस होती थी, अब नहीं होती। इससे मेरा स्वाभिमान बढ़ा है।

मेरा गाँव नामिक

माला

मेरा गाँव नामिक ग्लेशियर के पास बसा हुआ है। हमारे गाँव में बहुत सारे बुग्याल हैं। वहाँ पर दूर–दूर से लोग घूमने के लिये आते हैं। बुग्यालों में अनेक प्रकार के जंगली जानवर रहते हैं। जो जानवर हमारे गाँव के आस–पास के जंगलों में पाये जाते हैं उनमें भालू, घुरड़, काकड़, बारहसिंगा, सुअर, बन्दर, सौल, हिरन, लोमड़ी, लंगूर, तेंदुआ आदि मुख्य हैं।

हमारा गाँव कृषि पर आधारित है। गाँव में दालें, सब्जियाँ भरपूर मात्रा में होती हैं। लोग आलू, फूलगोभी, बन्दगोभी, राई, पालक, मूली, मेथी, मटर, प्याज, टमाटर, धनियाँ, सरसों, शिमला मिर्च आदि सब्जियाँ लगाते हैं। दालों में राजमा, गुरौंश, मसूर, भट्ट, गहत आदि प्रमुख हैं। अनाजों में गेहूँ, जौ, मडुआ, झंगोरा, चौलाई, फाफर, भांग आदि होता है। आलू व राजमा की पैदावार अच्छी होती है।

नामिक गाँव में जंगली जानवर नहीं आते हैं। कभी–कभी खेतों में बन्दर आते हैं। जब कभी खेतों में बन्दर आ जाते है तो सभी महिलाएं उन्हें भगाने के लिए जाती हैं। जब आलू की खेती होती है तो कभी–कभी शौल नुकसान पहुँचाते हैं। जंगली सुअर आतंक नहीं फैलाते।

नामिक गाँव में लगभग दो सौ पचास परिवार निवास करते हैं। हमारा गाँव जंगल से अधिक जुड़ा हुआ है पर जंगली जानवरों का इतना आतंक नहीं है। तथापि कुछ दिन पहले पास के जंगल में एक महिला पर चारा पत्ती काटते समय भालू ने हमला कर दिया था। भालू महिला पर झपटा। महिला बेहोश हो गई। इन परिस्थितियों में जंगली जानवरों का डर रहता है। जंगल हरे–भरे हैं। ग्रामवासी अकेले जंगल में नहीं जाते हैं। महिलाएं झुंड बनाकर घास, लकड़ी लेने के लिये जंगल में जाती हैं।

गाँव को जोड़ता है ग्राम शिक्षण केन्द्र

मनीषा महरा

मेरा जन्म गंगोलीहाट ब्लॉक, पिथौरागढ़ जिले के फडियाली गाँव में हुआ। परिवार में माता–पिता, दादा–दादी, दो बहनें और एक भाई है। दीदी और भाई पढ़ रहे हैं। मैं भी राजकीय महाविद्यालय गणाई गंगोली से पढ़ाई कर रही हूँ।

मैंने प्राथमिक शिक्षा गाँव के स्कूल से प्राप्त की। उसके आगे राजकीय इंटर कॉलेज नायल में पढ़ा। मुझे सभी विषय अच्छे लगते थे। राजनीति–विज्ञान में ज्यादा रुचि है लेकिन गणित कम समझ में आती है। मेरा परिवार खेती और पशुपालन करता है। हमारे पास एक गाय और दो बकरियाँ हैं।

हाथ–मुँह धोकर चाय बनाना और सबको देना, धारे से पानी भर कर लाना, झाड़ू लगाना, बर्तन धोना, खेतों में जाना, घास काटना, गोबर डालना, खाना पकाना आदि मेरे दैनिक घरेलू काम हैं। मैं पढ़ाई करके अध्यापिका बनना चाहती हूँ। कोविड–19 लॉकडाउन के कारण पढ़ाई में बहुत समस्या हुई।

फडियाली गाँव में ग्राम शिक्षण केन्द्र 2014 में खुला। मुझसे पहले दो अन्य शिक्षिकाओं ने इसे चलाया। मेरी इच्छा थी कि शिक्षण केन्द्र चलाऊँ। मैं सितम्बर 2019 में शिक्षिकाओं के प्रशिक्षण के लिये अल्मोड़ा गयी। हमारा केन्द्र गाँव के मंदिर परिसर में चलता है। कमरा खूब बड़ा है और बाहर खेलने के लिये मैदान भी है।

ग्रीष्मकाल में केंद्र मंगलवार से शनिवार को शाम चार से छः बजे तक खुलता है। जाड़ों में चार से पाँच बजे तक ही खुल पाता है। इतवार के दिन डेढ़ बजे से खुलता है। सोमवार को साप्ताहिक अवकाश रहता है। शिक्षण–केन्द्र में चार सौ इक्यावन किताबें, फुटबॉल, कैरम, बैडमिंटन आदि खेल–सामग्री रखी हुई है। मैंने लगभग तीन सौ किताबें पढ़ी हैं। 'गाँव की बेटी' सबसे ज्यादा पढ़ी गयी किताब है। मुझे तीन कंजूस व अन्य कहानियाँ' सबसे रोचक लगी। केंद्र में 'अमर उजाला' दैनिक अखबार भी आता है। चित्रकारी, केन्द्र की सजावट, कहानी सुनना और सुनाना तथा सुलेख की गतिविधियों में बच्चों को आनंद आता है।

शिक्षण–केन्द्र खुलने से बच्चों के जीवन में यह बदलाव आया है कि वे शाम को व्यर्थ में इधर–उधर घूमने के बजाय अपनी रुचि से शैक्षिक व रचनात्मक कार्यों में व्यस्त रहते हैं। किशोरियों और महिलाओं ने अपने विकास के मुद्दों को समझा है। उन्होंने गोष्ठी–सम्मेलनों में बोलना, अपनी बातें प्रस्तुत करना भी सीखा है।

शिक्षा का पुल

गंगा कन्यारी

मैं पिथौरागढ़ जिले के नामिक गाँव में रहती हूँ। घर में पिताजी और पाँच भाई–बहन हैं। मैंने नामिक गाँव में ही शिक्षा ग्रहण की और हाईस्कूल तक पढ़ा। जब मैं स्कूल जाती थी तो एक ही सपना था कि पढ़ लिख कर कुछ काम करूँगी। जब मैं कक्षा दस में पढ़ रही थी तब घर की परिस्थितियों के कारण पढ़ाई छोड़नी पड़ी। नवम्बर के माह में भाई नौकरी के लिये चले गये। बड़ी बहन की शादी हो चुकी थी। पिताजी डाक पहुँचाने जाते हैं। घर का काम करने के लिए कोई नहीं था इसलिए पढ़ाई बन्द कर दी।

कुछ समय बाद तल्ला नामिक में ग्राम शिक्षण केन्द्र खुला। शिक्षिका की शादी होने वाली थी। ग्रामवासी मुझ से केन्द्र चलाने के लिए कहने लगे। मैंने यह बात घर–गाँव में कही पर आज्ञा नहीं मिली। उसके बाद हमारे विद्यालय के अध्यापक, पोस्ट मास्टर और गाँव के अन्य लोगों ने पुनः बात की और मुझे केन्द्र चलाने के लिए अनुमति मिल गयी। मैं स्वयं भी जीवन में कुछ करना चाहती थी। एक अप्रैल से केन्द्र में गयी।

केन्द्र चलाने से पहले गतिविधियों के बारे में मुझे जो भी जानकारी थी, उसी ढंग से काम किया। शुरूआत में बच्चे बहुत परेशान करते थे। मैं जो भी काम करती या उनसे कहती, वे अनसुना कर देते। मैंने धीरे–धीरे बच्चों का विश्वास जीत लिया। अब हम तल्ला नामिक और मल्ला नामिक दोनों केन्द्रों को एक साथ चलाते हैं। मेरे साथ माला दीदी भी हैं। वह रोज केन्द्र में आती हैं।

हम बच्चों को विषयानुसार पढ़ाते हैं। बच्चों को दो भागों में बाँटते हैं। छोटे बच्चों की एक टोली बनाते हैं। बड़े बच्चों को अलग से गतिविधियाँ करवाते हैं। माला दीदी बड़े बच्चों को पढ़ाती है तो मैं छोटे बच्चों को पढ़ाती हूँ। कभी मैं बड़े बच्चों को पढ़ाती हूँ तो माला दीदी छोटे बच्चों को पढ़ाती है। हम बच्चों को भावगीत कराते हैं, अलग–अलग प्रकार के खेल कराते हैं। भाषा–लेखन, भाषा–वाचन, गणित के जोड़–घटाना, गुणा, भाग, गिनती, पहाड़े आदि सिखाते हैं। पर्यावरण के बारे में चर्चा और अन्य अनेक गतिविधियाँ करते हैं।

हम केन्द्र को तीन से पाँच बजे तक खोलते हैं। छुट्टी के दिन दस से बारह बजे तक केन्द्र खोलते हैं। केन्द्र में बहुत से बच्चे आते हैं। हम बच्चों को पाठ्य–पुस्तकों के अलावा कहानी, कविता, जीवनी एवं अन्य किताबें पढ़ने के

लिए कहते हैं। बच्चे भी अपनी रूचि के अनुसार विभिन्न विषयों की कहानियाँ और महापुरूषों के जीवन के बारे में पढ़ते हैं। लोक–कथाएं पढ़ने में बच्चे बहुत रूचि रखते हैं।

मुझे केन्द्र में जाना बहुत अच्छा लगता है। साथ ही, हम शिक्षिकाएं प्रशिक्षण लेने के लिए अल्मोड़ा जाती हैं। हम वहाँ पर यह सीखते हैं कि बच्चों, किशोरियों और महिलाओं के साथ बातें करने के लिए अलग–अलग मुद्दे होते हैं। गतिविधियाँ भी फर्क होती हैं। प्रशिक्षण में नयी–नयी जानकारी मिलती है। गाँव में वापस आकर हम उन्हीं जानकारियों और कौशलों को बताते हैं। इस तरह शिक्षा का एक पुल नामिक गाँव और अल्मोड़ा के बीच में बन गया है।

कम्प्यूटर शिक्षण

गौतम पंवार

मेरे जन्म का स्थान बछेर गाँव, जिला चमोली, में है। परिवार में माँ, पिताजी और भाई हैं। पिताजी कृषि करते हैं। जानवरों में गाय और बैल पाल रखे हैं। मेरी प्रारंभिक शिक्षा राजकीय प्राथमिक विद्यालय बछेर और नवज्योति विद्यालय सोनला बछेर में हुई। हाईस्कूल और इंटर राजकीय इंटर कॉलेज बछेर से किया। गढ़वाल विश्वविद्यालय श्रीनगर से स्नातकोत्तर और श्रीनगर गढ़वाल से ही आई.टी.आई. किया। मुझे गणित विषय अच्छा नहीं लगता है।

लॉकडाउन के समय हमारे गाँव में संक्रमण नगण्य रहा। सभी ग्रामवासियों ने अत्यंत सतर्कता के साथ कोविड–19 का सामना किया। सुबह उठकर गायों के साथ जंगल जाना और दिन में दो बजे कम्प्यूटर केन्द्र खोलना मेरी दिनचर्या रही। मुझे खेलों में बहुत रुचि है। इसके अतिरिक्त घूमने–फिरने, नई जगहें देखने का शौक है।

बछेर गाँव में कम्प्यूटर केन्द्र मार्च 2020 से शुरू हुआ। हमारा केन्द्र गाँव के पंचायत भवन में संचालित होता है। इस भवन में दो कमरे और एक बरामदा है। छुट्टियों में केन्द्र दोपहर में दो से पाँच बजे तक संचालित होता है। केन्द्र में पाँच कम्प्यूटर रखे हैं। पाँच–पाँच के समूह में बच्चे कम्प्यूटर का ज्ञान ले पाते हैं। जब बच्चे स्कूल जाते हैं तब केन्द्र शाम को चार बजे खुलता है। इतवार के दिन बच्चों की स्कूल से छुट्टी होती है। इस कारण केन्द्र दोपहर में जल्दी खोल देता हूँ। गाँव में सभी बच्चे कम्प्यूटर सीखना चाहते हैं। हर समूह में बच्चे अपनी बारी आने का इंतजार करते रहते हैं। इंतजार करते हुए बच्चों का समय व्यर्थ न जाये इस के लिये हम उन्हें किताबें पढ़ने के लिये देते हैं। बच्चे देश के प्रमुख बाल–साहित्य लेखकों द्वारा रची गयी कहानियाँ, नाटक, कविताएं, जीवनी आदि पढ़ते हैं। साथ ही, सामान्य ज्ञान बढ़ाने के लिये भी अनेक पुस्तकें और मैगजीन उपलब्ध रहती हैं। कम्प्यूटर में काम करना सभी को अच्छा लगता है।

घेरबाड़ से फसल बची

पायल बिष्ट

मेरा गाँव कोटेश्वर, गोपेश्वर से बारह किमी की दूरी पर स्थित है। गाँव में लगभग दो सौ नाली जमीन में कृषि होती होगी। लगभग सौ नाली (अनुमानित) के करीब भूमि बंजर होगी। बंजर भूमि में झाड़ियाँ तथा पेड़–पौधे हैं। इस प्रकार यह भूमि पूर्णतया बंजर भी नहीं कही जा सकती है। हमारे गाँव में ज्यादातर बाँज के जंगल हैं। अनुमानित तौर पर यह जंगल पन्द्रह हेक्टेयर भूमि पर फैला होगा। यह जंगल वन पंचायत के अन्तर्गत आता है।

कोटेश्वर गाँव में पैंसठ परिवार रहते हैं। गाँव में गेहूँ, जौ, झंगोरा, मडुआ, धान आदि फसलें उगाते हैं। गाँव में बहुत समय से यही खेती की जाती है। सब्जियों में लौकी, कद्दू, तोरई, आलू, प्याज, टमाटर, बींस आदि उगाई जाती हैं। फलों में संतरे, नींबू, नारंगी, नाशपाती तथा अब गर्मी बढ़ने के कारण आम भी होने लगे हैं। बंदर, जंगली सुअर तथा भालू का फसलों पर बहुत ज्यादा आतंक है। अब कुछ लोगों ने खेतों में घेरबाड़ कर दी है। इससे जंगली सुअरों का आतंक थोड़ा कम हुआ है। बंदरों द्वारा नुकसान किया जाता है, फिर भी ग्रामवासी फसलें व सब्जियाँ लगाते ही हैं।

गाँव में सभी लोग कृषि करते हैं। कृषि के साथ–साथ ज्यादातर परिवारों के द्वारा दुग्ध–व्यवसाय किया जाता है। मत्स्य–पालन व मुर्गी–पालन का व्यवसाय भी किया जाता है। महिलाएं आजीविका के लिए मौसमानुसार सब्जी बेचती हैं। शासन द्वारा ग्रामीणों को कम रूपयों में तार–बाड़ करने का सामान दिया जा रहा है। इससे जंगली सुअरों व बंदरों के उत्पात से कुछ बचाव हो रहा है।

ग्रामवासियों द्वारा बंदरों को भगाया जाता है। कभी–कभी ग्रामवासी रात में जंगली सुअरों को भगाने के लिये भी खेतों में जाते हैं। हमारे गाँव में अभी कोई ऐसी घटना नहीं हुई है जिसमें जंगली जानवरों द्वारा जनहानि हुई हो। पास के गाँव बणद्वारा में तीन महीने पहले गुलदार ने दो परिवारों में गायों को मारा था। उस समय भय के कारण ग्रामवासी रात को बाहर नहीं निकल रहे थे। वे शाम को जल्दी ही गौशाला से घर आ रहे थे ताकि रास्ते में किसी जंगली पशु से सामना न हो जाये।

जंगली जानवरों से हो रहे नुकसान के कारण ग्रामवासी खेती की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दे रहे क्योंकि आधी फसल तो जंगली सुअरों द्वारा नष्ट हो जाती है। साथ ही, बंदरों के झुंड फसल और सब्जी को तैयार ही नहीं होने देते। कच्चे फल, सब्जियाँ, दालें इत्यादि सभी कुछ नष्ट कर देते हैं। ऐसी परिस्थिति में ग्रामवासी मेहनत कर के खेती करें भी तो क्यों?

आजीविका पर असर

रेनू आर्या

मेरे गाँव का नाम कसून है। कसून गाँव में परिवारों की संख्या अड़चालीस है। गाँव में चीड़, बाँज, सुरई, देवदार इत्यादि के पेड़ हैं। इन पेड़ों से हमारा गाँव घिरा हुआ है। हमारे गाँव में पहले धान की खेती अधिक होती थी पर अब नहीं होती है। गाँव में धान की खेती अब इसलिए नहीं होती क्योंकि जंगली सुअर धान की फसल को बरबाद कर देते हैं। हमारे गाँव में पहले से आलू, प्याज, टमाटर, बंदगोभी, मटर आदि दूर–दूर तक खेतों में लगाया करते थे पर अब नहीं लगाते है। सिर्फ घरों के आस–पास वाले खेतों में ही सब्जियाँ लगाई जाती हैं। वो भी बहुत कम मात्रा में क्योंकि जंगली सुअर, बंदर, लंगूर, गाय, बैल, बकरियाँ आदि पशु खेतों में सब्जियों को खा जाते हैं। इस कारण गाँव में कम सब्जियाँ होती है। सभी ग्रामवासी कभी न कभी बाजार से सब्जियाँ खरीदते हैं।

गाँव में अधिकतर लोग कृषि से अपने परिवार पालते हैं। कृषि से उनका अपना थोड़ा रोजगार बन जाता है। गाँव में बहुत परेशानियाँ भी होती हैं। खेतों में लोग बहुत मेहनत करते हैं। आजीविका की बात करें तो जब से हमारे गाँव में सड़क आयी है, तब से लोगों ने अपना खुद का रोजगार खोल लिया है। किसी ने दुकान खोल ली है, कोई चाय बेच रहा है, कोई कपड़े सिल रहा है। इस कारण लोगों को ज्यादा तकलीफ नहीं हो रही है। गाँव में महिलाओं का अभी तक कोई समूह नहीं है। एक दो महिलाएं खुद सिलाई करके अपना रोजगार चला रही हैं।

कसून गाँव में महिलाओं की आजीविका के अधिक स्रोत हो सकते हैं। जैसे लोग सरकारी काम, खेतों में हल्दी लगाना, चाय के पेड़ लगाना, अदरक लगाना, बकरी और मुर्गी पालन का काम कर सकते हैं। आज ग्रामवासियों को सरकार उनकी जरूरत का सामान दे रही है। जैसे, बकरी, मुर्गी आदि और खेतों के लिए कीटनाशक दवाएं इत्यादि मिल रही हैं। हमारे गाँव में आज भी वही फल होते हैं जो पहले होते थे लेकिन अब पहले की अपेक्षा ज्यादा फल होते हैं। लोग फल बेचते भी हैं। संतरे, दाड़िम, नाशपाती, अंगूर, अमरूद, तीमिल आदि फल आज भी हमारे गाँव में होते हैं।

पहले से गाँव में मडुआ बोते थे। वो भी बड़े–बड़े खेतों में लगाया जाता था। अब जंगली सुअरों और बंदरों की वजह से अनाज कम बोते हैं। ऐसे ही ज्वार, मादिरा की भी फसलें कम होने लगी हैं। पहले से गाँव के लोग इन फसलों को बेचा भी करते थे लेकिन आज स्वयं खाने के लिए ही पूरा नहीं हो रहा है। आज गाँव के लोग खुद ही अनाज खरीद कर खा रहे हैं।

अब पहाड़ों में सभी जगह अनाज बहुत कम हो रहा है। इस कारण लोग बाजार से खरीद कर खा रहे हैं। इस के अतिरिक्त सरकारी राशन की दुकान से भी अनाज ले रहे हैं।

आजकल सभी जगह जंगली जानवरों का आतंक है। प्रशासन के लोग हम ग्रामवासियों की बातें सुन तो लेते हैं पर मानते नहीं हैं। जंगली जानवरों को भगाने के लिए गाँव से ही रोज दस–पन्द्रह लोग जाते हैं। जंगली जानवरों से परेशान ग्रामवासी बारी–बारी से उन्हें भगाते हैं। इससे कुछ फसलें बच जाती हैं। ग्रामवासियों को जंगली जानवरों से बहुत परेशानियाँ होती हैं। गाँव के लोग रात–रात भर खेतों में रहते हैं। दिन में भी लोग बंदरों को भगाते रहते हैं।

हमारे गाँव में जंगली जानवरों से खतरा है। बकरियों को भेड़िया खा जाता है। हम बकरियों को जंगलों में अकेले नहीं छोड़ते हैं। बन्दरों से सभी लोग परेशान हैं क्योंकि उनके झुंड फसलों को बर्बाद कर रहे हैं।

किशोरी संगठन

मनीषा बोरा

बहुत समय पहले की बात है, जब उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान के सहयोग से शैक्षणिक ग्रामोन्नति समिति संस्था ने हमारे गाँव में बालवाड़ी खोली। मैं रोज बालवाड़ी में जाती थी। हम सभी बच्चे खूब मस्ती करते हुए पढ़ते, भावगीत और प्रार्थना करते। फिर मैंने कक्षा एक से चार तक डसीलाखेत में पढ़ा। पाँचवीं कक्षा से मैं अपने भाई–बहनों के संग पढ़ने के लिये गणाई–गंगोली आ गयी। यहाँ हम किराये के घर में रहते और सब भाई–बहन एक ही विद्यालय में पढ़ते थे। वहाँ स्कूली पढ़ाई के साथ ही मैंने बहुत से अन्य लड़कों व लड़कियों के साथ श्री राजेन्द्र सिंह बिष्ट (संस्था समन्वयक) के घर में कम्प्यूटर पर काम करना सीखा। तीन–चार सालों के बाद मैंने रोज घर से ही स्कूल आना–जाना शुरू कर दिया। इस तरह मैंने इंटर तक की पढ़ाई पूरी की। बी.ए. द्वितीय वर्ष में पढ़ रही हूँ। परिवार में मम्मी–पापा, दो भाई और एक बहन हैं। हम सब मिलकर खेती करते हैं।

ग्राम शिक्षण केन्द्र मेरे घर में ही खुला है। वहाँ पर हम नई–नई गतिविधियाँ करते हैं और किताबें पढ़ते हैं। केन्द्र में चार सौ से अधिक किताबें हैं। केन्द्र में बच्चों के साथ ही बड़ी लडकियाँ अर्थात् किशोरियाँ भी आती हैं। हम सभी किशोरियों ने मिलकर एक किशोरी–संगठन बनाया। इसमें एक अध्यक्ष, एक सचिव और एक कोषाध्यक्षा बनी। कुल मिल कर बारह किशोरियाँ थीं। सबने मिलकर तय किया की हर महीने दस रुपये कोष में जमा करेंगे। इस तरह हमने कुछ धनराशि एकत्र की है।

शिक्षण केन्द्र के माध्यम से मुझे अल्मोड़ा जाने का मौका मिला। वहाँ पर बहुत से गाँवों की लडकियाँ आयी थीं। उन सब से मिल कर मैंने जाना कि यह दुनिया कितनी बड़ी और रोचक है। अब मैं अप्रैल 2021 से कम्प्यूटर केन्द्र में कार्य कर रही हूँ। मैंने अल्मोड़ा में कम्प्यूटर का प्रशिक्षण लिया। इस कारण केन्द्र चलाने में मुझे परेशानी नहीं होती।

संकट में घिरा जीवन

रितु आर्या

मेरे गाँव का नाम मनीआगर है। गाँव के आस–पास चीड़ और बाँज के जंगल हैं। काफल, उतीस, बुरांश, फल्यांट, मेहल इत्यादि के पेड़ भी इस जंगल में मिलते हैं। गाँव में लगभग ढ़ाई सौ परिवार रहते हैं। पहले से गेहूँ, धान, जौ, सोयाबीन, सरसों, गहत, मडुआ, मादिरा आदि फसलें लगाते थे। माल्टा, संतरा, नींबू, अखरोट, केला आदि फल होते थे। इस के अतिरिक्त लोग आलू, मूली, शिमला मिर्च, लौकी, कद्दू, बैंगन आदि सब्जियाँ लगाते थे।

पहले से सभी फसलें अधिक उत्पादन देती थीं। आज भी ये फसलें लगाई जाती हैं पर अब उत्पादन बहुत कम हो रहा है। पहाड़ों में लोगों ने बंदर, जंगली सुअर, भालू, हिरन के कारण फसलें और सब्जी लगाना छोड़ा तो नहीं हैं पर कम कर दिया है। हमारे गाँव में पहले से आलू, मूली, लौकी, कद्दू, बैंगन आदि सब्जियाँ पर्याप्त मात्रा में लगाई जाती थीं। अब बंदरों की वजह से ये सभी सब्जियाँ लगाना कम कर दिया है। जंगली जानवर फसलों को खा जाते हैं। साथ ही, खेतों में ही फसलों को बर्बाद कर देते हैं। इस कारण लोग घर से दूर के खेतों में बीज बोना छोड़ रहे हैं।

गाँव में लोग कृषि के अलावा आजीविका के अन्य साधन अपना रहे हैं। कुछ लोग कम्पनियों में काम करने जा रहे हैं। पुरूषों और महिलाओं के लिये पशु–पालन, मुर्गी–पालन, मछली–पालन, कम्पनियों एवं फैक्ट्रियों में काम करना, मजदूरी करना, कम्प्यूटर, बेकरी, फर्नीचर बनाना व बेचना आदि आजीविका के नये स्रोत बने हैं। महिलाओं के लिए आजीविका के नये स्रोतों में कपड़ों की सिलाई करके पैसे कमाना, पशु–पालन, कम्पनियों में जॉब करना, लकड़ी काट कर बेचना, ब्यूटी पार्लर में काम करके रोजगार करना आदि शामिल हैं।

जंगली जानवरों के लिए शासन–प्रशासन का दृष्टिकोण यही है कि जंगली जानवरों को चिड़ियाघर में रखा जाता है। जिससे मनुष्यों को कोई हानि न हो, न ही जानवरों को नुकसान हो।

ग्रामवासी अपने स्तर पर जानवरों को भगाने के अनेक उपाय कर रहे हैं। जब जंगली सुअर और बंदरों के झुंड फसलों को खाने के लिये खेतों में आते हैं तो लोग उन्हें भगाते हैं। लोग खेतों में पुराने कपड़ों का पुतला बना रहे हैं ताकि बंदर फसलें न खा सकें।

जब जंगली जानवर फसलों को खाने के लिए खेतों में आते हैं तो लोग गड्ढ़े बनाकर उन्हें ऊपर से किसी चीज से ढ़क सकते हैं। जंगली जानवरों को पता नहीं चलेगा कि उन्हें पकड़ने के लिए गड्ढे खोदे हैं। गड्ढ़े के ऊपर पत्तियाँ रख सकते हैं। जब जंगली जानवर वहाँ पर आयेंगे तो गड्ढ़े में फँस जायेंगे। रात को जानवर उससे बाहर नहीं निकल सकते। सुबह होने पर लोग वहाँ जा कर उन्हें कैद कर सकते है। फिर वन–विभाग को फोन करके बुलाने से कर्मचारी जानवरों को अपने साथ ले जा सकते हैं।

हमारे गाँव या आस–पास गुलदार अथवा भालू ने किसी पशु या मनुष्य को नहीं मारा है। तेंदुए के कारण ग्रामवासी रात को घर से बाहर कम निकलते हैं। यह जानवर रात को आता है एवं बकरी तथा कुत्तों को खा लेता है।

जब जंगली जानवरों को खाने को कुछ नहीं मिलता तो वे घरों के आस–पास आ जाते हैं। तेंदुए के कारण मनुष्य के जीवन में संकट घिरा हुआ है। जंगली जानवरों के कारण मनुष्य की अपनी जिन्दगी को नुकसान होता है और पालतु पशुओं की भी हानि होती है। इस कारण लोग जंगलों के नजदीक घर नहीं बनाते।

जंगली जानवरों से पालतू पशु ही नहीं अपितु मनुष्य का जीवन भी कष्ट में है। मनुष्य को अपनी जिन्दगी का डर है। तेंदुआ, जंगली सुअर आदि जानवर घरों के आस–पास आकर किसी पर भी हमला कर सकते हैं। इस कारण लोग रात को बाहर नहीं आते। ग्रामवासियों को अपने पालतू जानवरों की भी डर होती है। जब वे पालतु पशुओं को चरने के लिये जंगल में भेजते हैं तो तेंदुआ बकरियों को अपन भोजन बना लेता है।

सही दिशा मिली

विभा गहतोड़ी

मैं बुनाई प्रशिशिका और पूर्व में कम्प्यूटर साक्षरता केन्द्र की संचालिका रही हूँ। मैं पाटी कस्बे के तोली गाँव में रहती हूँ। एक प्राइवेट विद्यालय में शिक्षिका के रूप में कार्यरत होने के साथ ही 'पर्यावरण संरक्षण समिति' में 'स्किल ट्रेनर' भी हूँ। भविष्य के लिये बी.एड. की तैयारी कर रही हूँ।

मैंने छः महीने तक संस्था के केन्द्र में सिलाई और बुनाई की ट्रेनिंग ली। उसके बाद बुनाई और कम्प्यूटर ट्रेनर के रूप में काम करने का मन बनाया। महिलाओं और किशोरियों को बुनाई प्रशिक्षण दिया एवं बच्चों को कम्प्यूटर भी सिखाया।

विगत वर्षों में संस्था से जुड़कर कौशल सीखने के प्रति तत्परता के साथ ही स्वावलंबी बनने की प्रेरणा मिली। वर्तमान में आसपास के लोगों के कपड़े सिलने का प्रयास भी करती हूँ। मैं मेहनत करने से नहीं घबराती। गाँव में रह कर ही अनेक गतिविधियाँ कर लेती हूँ और इससे धन भी अर्जित करती हूँ। अध्यापिका, सिलाई, बुनाई और कम्प्यूटर प्रशिक्षिका के रूप में काम करने से आत्मविश्वास तो बढ़ा ही, स्वयं के कौशल भी बढ़े। आय–सृजन भी हुआ।

मेरी समझ में जिन्दगी से प्राप्त होने वाले अनुभव किताबी–ज्ञान से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। किताबें पढ़कर परीक्षा पास लेते हैं। डिग्रियाँ लेना बहुत बड़ी बात नहीं है। असली बात तो जीवन में आयी मुश्किलों से बाहर निकालना है। उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान अल्मोड़ा और पर्यावरण संरक्षण समिति पाटी ने मुझे एक सही दिशा प्रदान की है।

जंगली जानवरों को भगाने के लिये उपाय

प्रियंका आर्या

मेरे गाँव पल्यूँ में खेती की कुल जमीन लगभग पाँच सौ नाली होगी। गाँव में चीड़ के जंगल अधिक हैं। बाँज के पेड़ बहुत कम हैं। गाँव में दो सौ परिवार रहते हैं। पहले से धान, गेहूँ, बाजरा, जौ, मडुआ, मादिरा आदि फसलें लगाते थे। आलू, मटर, मूली, तैड़, पिनालू, गाजर, टमाटर, प्याज, बैंगन, पालक आदि सब्जियाँ होती थी। फलों में आम, नाशपाती, केला, अमरूद आदि लगाते थे। अब जंगली जानवरों के आतंक के कारण फसलों में धान, गेहूँ, जौ, मादिरा, आदि लगाना छोड़ रहे हैं। बंदरों के कारण लोग घरों में सब्जी, फल आदि नहीं लगा रहे हैं। आलू, कद्दू, लौकी, ककड़ी इत्यादि लगाना कम कर दिया है।

गाँव में आधे से अधिक जनता आजीविका के अन्य साधन अपना रही है। गाँव से शहरों को जाना और वहाँ पर कोई काम करना, यह प्रथा चली है। पुरूषों और महिलाओं के लिए आजीविका के नये स्रोत बने हैं। पुरूषों के लिए मजदूरी, मछली–पालन और महिलाओं के लिए सिलाई सेंटर खुले हैं। इन्हीं से महिलाएं अपनी आजीविका के स्रोत बढ़ा रही हैं।

ग्रामवासी अपने स्तर पर जानवरों को भगाने के लिए अनेक उपाय कर रहे हैं। जैसे खेतों में कपड़े के पुतले बनाना, काँटेदार तार की बाड़ करना, पहरा देना, पटाखे जला कर जानवरों को भगाना आदि। हमें गाँव में जंगली जानवरों के कारण बहुत परेशानी होती है। खेती नष्ट हो जाती है। सबसे बड़ी परेशानी तो यह है कि जंगली जानवर मनुष्यों पर भी आक्रमण कर रहे हैं।

पहले से ग्रामवासी खेती करने के लिए रात में भी खेतों में रहते थे। अब बहुत कम ग्रामवासी खेती करते हैं। जानवरों का आतंक बढ़ गया है। तेंदुए का आतंक बहुत ज्यादा रहता है। अन्य जंगली जानवरों के आक्रमण की आशंका भी बनी रहती है। इस कारण ग्रामवासी रात को बाहर आने से डरने लगे हैं।

समय अमूल्य है

कौशल्या रौतेला

हमारे दैनिक जीवन के लिए समय बहुत महत्वपूर्ण है, कीमती है। हमें समय बर्बाद नहीं करना चाहिए। समय चला जाता है तो दोबारा लौट कर कभी नहीं आता। हमारे धारी गोगिना ग्राम शिक्षण केन्द्र में जब भी अभिभावक या महिलाओं की गोष्ठी होती है तो यदि लोग समय पर नहीं आते तो मैं उनसे कहती हूँ कि सही वक्त पर आओ। गोष्ठी में जो भी देर से आता है उससे सर्वप्रथम हम लोग कारण पूछते हैं। हमारे गाँव में महिलाओं को समय की जानकारी कम है। उन से कहती हूँ जो काम कल करना है, वह आज करना चाहिए, जो आज करना है, उसे अभी करो। कबीर दास जी ने लोगों को यही सीख दी थी।

हमारे गाँव में जब से ग्राम शिक्षण केन्द्र खुला तब से महिलाएं और किशोरियाँ बहुत जागरूक हो गयी हैं। किशोरियाँ पढ़ाई के साथ–साथ सिलाई और कम्प्यूटर सीख रही हैं। बच्चे समय से ग्राम शिक्षण केन्द्र में आते हैं। जब गोगिना–धारी में सिलाई केन्द्र खुला तो मुझे समय नहीं मिल पाया। मैं सिलाई सीखने नहीं जा पायी। केन्द्र घर से बहुत दूर था। उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान में कार्य कर रही रमा दीदी ने इसके लिए सिलाई दूर है करके नजदीक में केन्द्र की शुरूआत की। तब भी मैं नहीं जाती थी लेकिन एक दिन मुझे समझ में आया कि अगर कोई संस्था ग्रामवासियों के बारे में इतना सोच रही है तो हमें भी कुछ करना चाहिए। तब से मैं नियमित रूप से सिलाई सीखने जाती हूँ। हमारी मार्गदर्शिका पुष्पा ही सिलाई सिखाती हैं। मुझे थोड़ा काम पहले आता था, बकाया आजकल सीख रही हूँ।

मैं सभी ग्रामवासियों से कहती हूँ हमें भी बदलते समय के अनुरूप कार्य करने चाहिये। हमें भी अपनी पहचान बनानी है। हमारी पहचान तभी बनेगी जब हम व्यक्तिगत और सामुहिक उन्नति के लिये कार्य करेंगे। सफलता तो परिश्रम, अच्छी सोच और अनुशासन में रहने से ही मिलेगी। गाँव में रह कर भी कुछ लोग प्रतिष्ठा पाते हैं क्योंकि वे अच्छी सोच और परिश्रम में विश्वास करते हैं। मैं ग्राम शिक्षण केन्द्र की शिक्षिका के रूप में बच्चों के साथ–साथ महिलाओं, किशोरियों को आगे बढ़ाने, सही मार्गदर्शन देने में विश्वास करती हूँ। हम सब ग्रामवासी उन्नति करेंगे तो स्वतः ही हमारे गाँव की कीर्ति चारों तरफ फैल जायेगी।

कम्प्यूटर केन्द्र

रिया रावत

मेरा जन्म दिगालीचौड़ा गाँव में हुआ। हम तीन भाई–बहन हैं। पिता जी की दुकान है और माता जी गृहणी हैं। मैं जनकाण्डे गाँव में अपने मामा के घर में रहती हूँ।

हमारे पास खेत हैं जहाँ हम अलग–अलग ऋतुओं के अनुसार फसलें उगाते हैं। घर में पालतू पशु भी हैं। हम गायों और बैलों को जंगल में घास चरने के लिये भेजते हैं। साथ ही, परिवार के सदस्य उनके लिये घास काटते हैं। खास कर, ठंड के मौसम में जानवरों को खिलाने के लिये घास सुखा कर रखनी पड़ती है।

कोरोना काल के दौरान मैं दसवीं पास करके ग्यारहवीं कक्षा में गयी। मैंने पाँचवीं तक सरस्वती शिशु मंदिर और फिर आगे डॉ. लीलाधर भट्ट विद्या मंदिर में पढ़ा। स्कूल जाने के लिये पैदल रास्ता होने के कारण कठिनाई भी हुई। खास कर तेज वर्षा होने और बर्फ पड़ने पर स्कूल आने–जाने में दिक्कत होती है। इसलिए कक्षा आठ से दस तक नजदीक में स्थित राजकीय इंटर कॉलेज मध्य–गंगोल में पढ़ा। मैंने हिंदी, सामाजिक–विज्ञान, गणित, अंग्रेजी और विज्ञान विषय पढ़े। ये सभी विषय मुझे अच्छे लगते थे। गृह–विज्ञान और संस्कृत पढ़ने में मेरी रुचि नहीं रही।

कोविड–19 लॉकडाउन के वक्त मैं सुबह छः बजे उठती थी। सात बजे तक योग करती और फिर व्यक्तिगत साफ–सफाई के बाद नौ बजे नाश्ता करती। फिर मैं टीवी देखती थी। एक बजे दिन का खाना होता। तीन बजे तक आराम करती थी। उसके बाद तीन से साढ़े पाँच बजे तक कम्प्यूटर सीखती थी। शाम को छः बजे घूमने जाती। वहाँ से वापस आ कर हाथ–पैर धोकर दस बजे तक पढ़ाई करती थी। मैं स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद आगे कॉलेज में पढ़ना चाहती हूँ। उसके बाद कोई नौकरी करने की इच्छा है।

हमारे गाँव में कम्प्यूटर केन्द्र नवम्बर 2020 से शुरू हुआ। मार्च 2021 तक इसे एक अन्य शिक्षिका ने संचालित किया। उनकी शादी हो गयी तो मेरा चयन हुआ। इस काम को करने की मेरी बड़ी इच्छा थी।

हमारा केन्द्र कृष्णकोट गाँव में संचालित होता है। केन्द्र में एक कमरा है। जगह साफ–सफाई वाली और माहौल शांत है। केन्द्र खुलने का समय गर्मियों में चार से छः और सद्रियों में ढ़ाई से साढ़े चार बजे तक है।

केन्द्र में तीन कम्प्यूटर, एक प्रिंटर, एक ब्लैक–बोर्ड, घड़ी, एक अलमारी और अनेक किताबें रखी रहती हैं। किताबों की संख्या सौ–डेढ़ सौ के लगभग है। बच्चे केन्द्र में किताबें पढ़ते हैं। किताबों को घर भी ले जाते हैं। पढ़ने के बाद वापस कर देते हैं। पंचतंत्र, एक कंजूस और अन्य कहानियाँ बच्चों को सबसे अच्छी लगीं। बच्चों को कम्प्यूटर में टाइपिंग और पेंटिंग करना पसंद है। हमारे गाँव में केन्द्र खुलने से बच्चों को कम्प्यूटर चलाना आ गया है और वे पढ़ने में होशियार हो गए हैं।

लोग खेती छोड़ रहे

करिश्मा सगोई

मेरे गाँव का नाम सुन्दरगाँव है। यह चमोली जिले के कर्णप्रयाग ब्लॉक में आता है। गाँव में खेती की कुल जमीन सात हेक्टेयर के करीब होगी। हमारे गाँव में अधिक मात्रा में बाँज का वन तथा कुछ चीड़ का वन–क्षेत्र है। हमारे गाँव का वन पंचायती है। गाँव में कुल अड़चालीस परिवार रहते हैं। पहले गाँव में अधिकतर गेहूँ, जौ, धान, झंगोरा, मडुआ, गहत, काली दाल, मसूर की दाल, भट्ट, सोयाबीन, भंगीरा, जखिया आदि फसलें होती थी। सब्जियों में लौकी, कद्दू, सेमला, आलू, प्याज, ककोड़ा, मिर्च, धनिया, पिनालु आदि उगाई जाती थीं। फलों में आम, केला, नाशपाती, चुहारू, नारंगी, अमरूद आदि अधिक मात्रा में मिलते थे।

गाँव में पहले से सबसे अधिक मात्रा में बोई जाने वाली फसलें आज भी बोई जाती हैं लेकिन अब कम मात्रा में बोया जा रहा है। बंदर, जंगली सुअर, भालू, हिरन फसलों को नुकसान पहुँचाते हैं। इन जानवरों को भगाने के लिए लोग सामूहिक रूप से खेतों में गश्त लगाते हैं। गाँव में लोग कम हैं। वे कृषि के अलावा अन्य कार्य भी करते हैं। कोई दुकान, कोई वाहन–चालक बना है। महिलाएं सिलाई सीख रही हैं। एक–दूसरे के कपड़े सिल रही हैं। युवक छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ा रहे हैं। महिलाएं सिलाई सीखकर अपनी आय बढ़ा रही हैं। वे संतरे, गन्ने और आँवले का जूस बनाती है। इसे बेचने से भी आय–सृजन होता है।

ग्रामवासियों ने बंदरों को भगाने के लिए बारी लगायी है। जो जानवर रात को खेतों में आते हैं उन्हें कन्टर, सीटी, भोंपू लेकर भगाते हैं। एक साल पहले गुलदार ने हमारे गाँव में लगभग बारह गायें मारी थी। वह हर एक माह में दो–तीन गायों को मार डालता था। फसलें कटने के बाद ग्रामवासी गायों को खेतों में चरने के लिए छोड़ देते थे तब गुलदार दिन में ही गायों को मार देता था।

वैसे तो जंगली जानवर गाँव की तरफ कम आते हैं, खेतों की तरफ ही रहते हैं तथापि ग्रामवासियों को डर होता ही है। हमारे गाँव में जंगली जानवरों को लेकर यही परेशानी है कि वे खेतों में नुकसान पहुँचाते हैं। जो भी बोया हुआ हो उसे नष्ट कर देते हैं। इस कारण लोग गाँव से पलायन कर रहे हैं। वे फसलों को नहीं बो रहे हैं। सिंचित खेतों में समय पर बारिश न होने के कारण भी अब लोग खेती छोड़ रहे हैं।

भारतीय हूँ–गर्व है

पवन सिंह मेहता

पहले हमारा परिवार हरियाणा के गुरुग्राम में रहने लगा था। वहाँ मैंने नर्सरी से कक्षा दो तक पढ़ा किंतु शहर में मन नहीं लगा। उसके बाद हमारा परिवार वापस आकर कपकोट, जिला बागेश्वर, में रहने लगा। वहाँ मैंने कक्षा तीन से सात तक पढ़ाई की। कोरोना के कारण कक्षा आठ अपने गाँव रातिर में किया। जब गाँव में आया तो बहुत से बच्चे मिले लेकिन मुझे अकेला रहना और कम बोलना पसंद है। मेरे पिताजी गाड़ी चलाते हैं और माताजी घर का काम करती हैं। कोरोना के कारण मैं पूरे दिन घर पर ही रहता था। शहरों में तो बच्चे इन्टरनेट के माध्यम से पढ़ाई कर रहे थे पर हमारे गाँव में नेटवर्क ही नहीं है। इस कारण बच्चों का भविष्य खतरे में पड़ गया। उस समय सावित्री दीदी ने बताया कि हम ग्राम शिक्षण केन्द्र में अपनी पढ़ाई जारी रख सकते हैं।

मेरा जन्म 2008 में ग्राम रातिर, जिला बागेश्वर में हुआ। मैंने अपने विद्यालय में कक्षा आठ में सर्वाधिक अंक प्राप्त किये। मेरे परिवार में पाँच लोग हैं। परिवार के सबसे बड़े सदस्य मेरे दादा जी हैं। उनकी उम्र लगभग पैंसठ साल है। मैं अपने माता–पिता की इकलौती संतान हूँ।

शामा के आगे नामिक ग्लेशियर तक एकमात्र इंटर कॉलेज हमारे गाँव, रातिरकेठी, में है। इस विद्यालय में गोगिना, कीमू, नामिक, कापड़ी आदि गाँवों के बच्चे अध्ययन करते हैं। मैं भारत का वीर सिपाही बनना चाहता हूँ। मेरा बचपन से यही सपना है।

हमारे परिवार के पास गाय, भैंस, बकरियाँ, कुत्ते और खरगोश हैं। मेरे परिवार और संपूर्ण गाँव का रोजगार खेती ही है। कोरोना काल में सभी प्रवासी लोग अपने–अपने घरों को वापस आ गये और गेहूँ, चना, मटर, मक्का, बाजरा, जौ, मडुआ, सरसों आदि फसलें उगाई। गाँव में विद्यालय, सरकारी अस्पताल, बिजली–पानी आदि सभी सुविधाएं हैं।

भारत सरकार की बदौलत हम कोरोना महामारी के समय भरपेट भोजन कर रहे थे। सरकार हर महीने हमें मुफ्त में राशन भेज रही है जो नियमित रूप से प्राप्त हो रहा है। सरकार मुफ्त दवा और कोविड कण्ट्रोल के लिये डॉक्टरों की टीम भी भेज रही है। मुझे गर्व है कि मेरा जन्म भारत जैसे देश में हुआ।

गुलदार पालतू पशुओं पर हमला कर रहे

रचना नेगी

चमोली जिले के कर्णप्रयाग विकास खंड में एक गाँव है जाख। इस गाँव में लगभग आठ हेक्टेयर जमीन होगी। गाँव में सबसे ज्यादा बाँज का जंगल है। हमारे गाँव में पानी की कमी नहीं होती। हमारा पूरा जंगल वन पंचायती है। गाँव में एक सौ सत्तर परिवार निवास करते है। पहले हमारे गाँव में गेहूँ, धान, जौ, मडुआ (कोदा), भंगीरा, मसूर, काली दाल, गहत, भट्ट, सोयाबीन, लौकी, कद्दू, छेमला, आलू, प्याज, ककोड़ा, मिर्च, धनिया, पिनालु आदि फसलें उगाई जाती थीं। फलों में आड़ू, आम, केला, नाशपाती, संतरा, चुहारू, नारंगी, अमरूद आदि फल अधिक मात्रा में होते थे। आज भोज्य पदार्थों के उत्पादन में कमी आयी है। युवक ट्यूशन पढ़ा कर अपनी आजीविका पूरी कर रहे हैं। महिलाएं सिलाई सीखकर धन अर्जित कर रही हैं। साथ ही, कुछ महिलाएं गाँव में संतरे, गन्ने, आँवला, ऐलोवेरा का जूस बना रही हैं।

ग्रामवासियों ने बंदरों को भगाने के लिए बारी लगायी है। जो जानवर रात को खेतों में आते हैं उनके लिए लोग थाली, कन्टर, सीटी, भोंपू बजाते हैं। उन्हें भगाने के लिए खेतों में जाते हैं। गुलदार ने एक साल पहले हमारे गाँव में बहुत सी गायें मारी थी। गुलदार हर माह गायों को मार रहा था। जब फसलें काट दी जातीं तो ग्रामवासी गायों को खेतों में चरने के लिए छोड़कर घर आ जाते थे। तब गुलदार दिन में ही गायों को मार रहा था।

गाँव में पहले की तरह हर प्रकार की फसलें बोई जाती हैं लेकिन अब कम मात्रा में लगाते हैं। ऐसी कोई फसल नहीं जो हमारे गाँव में न बोई जाती हो।

बंदर, जंगली सुअर, भालू, हिरन, फसलों को नुकसान पहुँचाते हैं। गाँव में एकता होने के कारण बंदरों के झुंडों को भगाने के लिए हर दिन छः लोगों की बारी लगती है। इसी प्रकार जंगली सुअर, हिरन, भालू इत्यादि जानवरों को भगाने के लिए भी गाँव के लोग रात को सामूहिक तौर पर खेतों में जाते हैं। खेतों में पुतले भी बनाते हैं ताकि जानवर डर जायें और हमारी फसल बची रहे।

हमारे गाँव में कम ही लोग हैं जो कृषि के अलावा अन्य आजीविका के साधन अपना रहे हैं। तथापि कुछ महिलाएं सिलाई सीखकर आसपास के लोगों के कपड़े सिल कर आय अर्जित कर रही हैं।

हिंसक जानवर घरों की तरफ कम आते हैं। वे ज्यादा संख्या में खेतों की तरफ ही रहते हैं इसलिए ग्रामवासियों को डर नहीं होता है। हमारे गाँव में जंगली जानवरों को लेकर यही परेशानी है कि वे फसल और खेतों को नुकसान पहुँचाते हैं। खेतों में जो भी बोया हुआ हो उसे पूरी तरह नष्ट कर देते हैं। इस कारण लोग गाँव से पलायन कर रहे हैं। यदि ग्रामवासी ज्यादा फसलों को उगायें तो भी मेहनत के अनुरूप फल नहीं मिलता। जहाँ असिंचित खेती है वहाँ समय से बारिश न होने के कारण भी लोग जमीन को बंजर कर रहे हैं और फिर छोड़ रहे हैं।

बच्चों के साथ स्वयं आगे बढ़ो

रेनू बोहरा

मैं लॉकडाउन के समय सुबह छः बजे उठकर सबसे पहले पानी भरती थी। उसके बाद बर्तन धोना, नाश्ता बनाना मोबाइल फोन चलाना आदि कार्य होते। नाश्ते के बाद माँ के साथ खेत में काम करने जाती थी। खेतों से ग्यारह बजे तक घर लौट आते और खाना खाकर आराम करते। शाम को पुनः खेतों में जाकर काम करते। माँ रात का खाना बनाती। मैं खाने के बाद फोन चलाती और ग्यारह बजे तक सो जाती।

मेरा जन्म पाटी ब्लाक, कमलेख गाँव, जिला चम्पावत में हुआ। मैंने बारहवीं तक पढ़ाई की है। आठवीं तक पोखरी, नौवीं–दसवीं धूनाघाट हाईस्कूल और इसके आगे खेतीखान में पढ़ा। परिवार में माँ और भाई हैं। बड़ी बहन की शादी हो गयी है। हम लोग खेतीबाड़ी करते हैं।

मुझे कहानियाँ पढ़ना और सुनना अच्छा लगता है। मैं छोटे बच्चों के साथ खेलना बहुत पसंद करती हूँ। लॉकडाउन के दौरान मैं कभी–कभी बच्चों को अपने घर बुलाकर खेल कराती थी। पढ़ने के लिये किताबें देती थी। मैं भी उनके साथ पढ़ती थी। इसके साथ ही केन्द्र की साफ–सफाई भी करते थे। मेरे गाँव में लोग आपस में मिलजुल कर रहते हैं। सुख–दुःख में एक–दूसरे का साथ देते हैं। गाँव में ग्यारह नौले हैं। एक–दो स्रोत गर्मियों में सूख जाते हैं परन्तु पानी की कोई कमी नहीं होती।

हमारे गाँव में ग्राम शिक्षण केन्द्र 2017 में खुला। सबसे पहले मेरी दीदी शिक्षिका बनी। कुछ महीने बाद उसकी शादी होने पर मैंने केन्द्र का संचालन किया। मेरी शादी होने पर यह दायित्व गाँव में दूसरी लड़की को मिल गया। उस ने एक साल तक केन्द्र चलाया और फिर एक अन्य लड़की आ गयी। उसके बाद नवम्बर 2020 में पुनः यह जिम्मेदारी मुझे मिल गयी। केन्द्र में लगभग ढ़ाई सौ किताबें और खेल का सामान रखा है। इस सामग्री का उपयोग बच्चों की शिक्षा के लिये किया जाता है।

ग्रामीणों की सोच

विनोद कुमार

वर्तमान में जंगली जानवरों के उत्पात के कारण संपूर्ण उत्तराखण्ड के ग्रामीणजन परेशान है। कहीं जंगली सुअरों और बंदरों का आतंक है तो कहीं भालू, गुलदार, हिरन, हाथी और नील गाय आदि जंगली जानवरों से दिन प्रतिदिन परेशानियाँ बढ़ रही हैं। जहाँ एक तरफ मनुष्य की आजीविका के मुख्य स्रोत खेती को नुकसान हो रहा है, वहीं हिंसक हो चुके जंगली जानवरों ने मनुष्यों एवं पालतु पशुओं को भी निवाला बनाया है। पहाड़ के गाँवों में तो सबसे अधिक नुकसान लोगों की खेती को हो रहा है। आजकल लोगों की खेती में बहुत कम रूचि है क्योंकि मेहनत के बराबर उत्पादन नहीं मिल पा रहा। जंगली सुअरों के झुंड और बंदरों का हमारे क्षेत्र में बहुत आतंक है। फलस्वरूप ग्रामवासी फल, अनाज, सब्जी आदि का उत्पादन नहीं कर पा रहे।

हमारे ग्राम–क्षेत्र में खेती के बाद पशु–पालन लोगों की आजीविका का मुख्य साधन रहा। पालतू पशुओं को भी जंगली जानवरों ने बहुत नुकसान पहुँचाया है। गुलदार ने कई पालतू जानवरों को मार दिया है। देखा जाये तो जंगली जानवरों के नुकसान से मनुष्य की आजीविका अत्यंत प्रभावित हुई है। ग्रामीण मानते हैं कि हमारी आजीविका के मुख्य स्रोत खेती और पशुपालन हैं। इन दोनों स्रोतों को जंगली जानवरों ने नुकसान पहुँचाया है। खेतों में कुछ उत्पादन नहीं हो पा रहा है। जंगली सुअर, बंदर एक दिन में सब फसलें नष्ट कर देते हैं। अब लोगों की खेती करने में बिल्कुल रूचि नहीं है। लोगों को लगता है कि हमारी मेहनत बर्बाद जा रही है। पहले के समय में खेती व पशु–पालन से लोगों की आजीविका चल जाती थी लेकिन आज जंगली जानवरों के कारण ग्रामवासी परेशान हैं। लोग मजबूरी में अपनी आजीविका चलाने के लिए शहरों की ओर जा रहे हैं। पलायन का एक मुख्य कारण यह भी है।

हमारे गाँव का नाम खोला है। गाँव में मुख्य रूप से चीड़ का जंगल है। खोला में एक सौ पन्द्रह परिवार निवास करते हैं। हमारे गाँव में पहले आड़ू, नाशपाती, नींबू आदि फल होते थे। अब बंदरों के आतंक से उत्पादन कम हो गया है। गाँव में लोग गेहूँ, धान, मडुआ, मादिरा, सरसों और दालें आदि उगाते थे। अब इनका उत्पादन बहुत ही कम करते हैं। पहले हमारे गाँवों में मुख्य रूप से मौसमानुसार आलू, प्याज, गडेरी, बैंगन, शिमला–मिर्च आदि सब्जियाँ होती

थीं। जंगली सुअरों और बंदरों के अतिक्रमण के कारण अब लोगों की खेती में रूचि कम हो गई है।

पहले की अपेक्षा अनाज का बहुत कम उत्पादन हो रहा है। आज भी हमारे गाँव में सब्जी का उत्पादन अच्छा होता है। लोग खूब सब्जी उगाते हैं लेकिन पहले की अपेक्षा बहुत कमी आयी है। पहले लोग प्याज, गडेरी इत्यादि नदी के किनारे की जमीन में लगाते थे। वहाँ पर सिंचाई की अच्छी सुविधा होने से भरपूर उत्पादन होता था लेकिन अब इन सब्जियों को बंदरों और जंगली सुअरों ने नुकसान पहुँचाया है। अब लोग घर के आस–पास बहुत कम मात्रा में सब्जी लगाते हैं। पानी की कमी के कारण भी उत्पादन कम हो रहा है।

गाँव में लोग कृषि के अलावा शहरों में प्राइवेट नौकरी, मजदूरी/मिस्त्री, दूध डेयरी, दर्जी, वाहन चालक आदि साधन अपना रहे हैं। अब पुरूषों एवं महिलाओं के लिए आजीविका के कुछ नये स्रोत हो गये हैं। कुछ लोग मनरेगा में काम करते हैं। कुछ दूध डेयरी का काम, कुछ सिलाई करके अपनी आमदनी बढ़ा रहे हैं। जंगली जानवरों के लिए शासन–प्रशासन का कोई स्पष्ट दृष्टिकोण नहीं है। शासन–प्रशासन लोगों की बातें सुनते हैं लेकिन अमल में नहीं लाते। इस कारण समस्या बढ़ती जा रही है।

पहले जंगली सुअर, बंदर, गुलदार घर के नजदीक नहीं आते थे, आते भी तो कभी–कभार। आजकल जंगली जानवर बहुत ही निडर व हिंसक हो गये हैं। लोगों को खतरा बना रहता है। लोग अपने स्तर से हल्ला करके, रात में कनस्तर बजाकर उन्हें भगाने के छोटे–छोटे उपाय करते हैं।

हमारे गाँव के आस–पास मनुष्यों को जंगली पशुओं ने कोई नुकसान नहीं पहुँचाया है लेकिन कुछ गाँवों में गुलदार, जंगली सुअरों के द्वारा मनुष्यों पर हमला करने की घटनाएं सुनाई देती हैं। स्वयं हमारे गाँव के आस–पास गुलदार ने कई पालतू जानवरों को मारा है। जंगली जानवरों के भय से ग्रामवासी रात को अकेले घरों से बाहर नहीं निकालते हैं।

पहले लोग फल, सब्जी, दालें, मसाले, अनाज आदि लगभग खाने की पूरी चीजें घर पर ही उत्पादन कर लेते थे लेकिन आज बाजार पर निर्भर हैं। महंगाई भी बढ़ती जा रही है। बाजार से सामान खरीदने के लिए पैसे की जरूरत होती है। इस कारण लोग मजबूरी में काम करने बाहर शहरों में जा रहे हैं।

किसान महिलाओं की मेहनत बेकार जा रही

साक्षी बिष्ट

मेरे गाँव का नाम मण्डल है। यह गाँव चमोली जिले के मुख्यालय गोपेश्वर से तेरह किमी की दूरी पर स्थित है। हमारे गाँव में पैंसठ परिवार हैं। मण्डल गाँव में खेती की कुल जमीन अनुमानतः लगभग पन्द्रह हेक्टेयर होगी। हमारे गाँव में बाँज एवं बुरांश का जंगल अधिक है। गाँव के आस–पास के जंगल वन पंचायत के हैं। थोड़ा–बहुत चीड़ का जंगल भी है। इसके अतिरिक्त जंगलों में अन्य कई प्रकार के पेड़–पौधे होते हैं। इन का उपयोग पशुओं के लिये चारा, बिछावन तथा ईंधन के लिए किया जाता है।

हमारे गाँव में पहले गेहूँ, जौ, सरसों, मडुआ, धान, झंगोरा तथा कई प्रकार की दालें उगायी जाती थीं। सब्जियों में आलू, कद्दू, लौकी, पालक, राई, मटर, टमाटर आदि होता रहा। संतरा, नीबू, नारंगी आदि फल होते थे। अब जंगली सुअर, भालू, हिरन, बंदर और लंगूर के कारण सभी फसलों, फलों एवं सब्जियों को नुकसान हो रहा है। जंगली जानवर खेतों में आकर ग्रामवासियों की पूरी फसलों को नष्ट कर रहे हैं। इस कारण खेतों से कुछ लाभ नहीं हो रहा। महिलाओं की पूरी मेहनत बेकार जा रही है। इस कारण अब ग्रामवासी धीरे–धीरे खेती करना कम कर रहे हैं।

गाँवों में अधिकतर लोग अब कृषि की ओर ध्यान नहीं दे रहे। वे आजीविका के अन्य साधनों को अपना रहे हैं। पुरूष मत्स्य पालन, मौन पालन का कार्य कर रहे हैं। वे काम के लिए गाँव से बाहर जा रहे हैं। चार–धाम की यात्रा के समय बहुत से लोग छोटी सी दुकान खोल लेते हैं। इससे उनकी अच्छी कमाई हो रही है। महिलाओं के लिए आजीविका का स्रोत पशुपालन है। साथ ही खेतों के चारों ओर जाली लगाकर सब्जी का उत्पादन कर रहे हैं। इससे उन्हें कुछ आर्थिक लाभ हो रहा है।

जंगली जानवरों की तरफ शासन–प्रशासन का कोई ध्यान नहीं है। उन्हें भगाने में शासन–प्रशासन द्वारा कोई भी सहायता प्रदान नहीं की जाती है। ग्रामवासी अपने स्तर पर जानवरों को भगाने का प्रयास करते हैं। दिन में बंदरों ओर लंगूरों को भगाने के लिए हर दिन चार–छः महिलाएं जाती हैं। रात में जंगली सुअर, भालू, हिरन को भगाने के लिए सभी महिलाएं समूह बनाकर शोर

करती हुई खेतों में जाती हैं। इसके बावजूद जंगली जानवर फसलों को नुकसान पहुँचाते हैं।

गाँव में गुलदार एवं भालू का डर अधिक तो नहीं है लेकिन फिर भी थोड़ा भय लगता ही है। कई बार सुनने को मिला है कि आस–पास के गाँवों में गुलदार ने पशुओं को मारा है। इस कारण डर लगा रहता है। रात को बाहर जाने में डर लगता है इसलिए हम अकेले घर के बाहर नहीं जाते हैं।

जंगली जानवरों के कारण सबसे बड़ी परेशानी यही है कि वे फसलों को नष्ट कर रहे हैं। इस कारण ग्रामवासियों की मेहनत बेकार जा रही है। ग्रामवासी अब खेती कम कर रहे हैं। बंदर घरों में भी बहुत उत्पात मचा रहे हैं। वे घर के अन्दर से रोटी और खाने का अन्य सामान उठा ले जाते हैं। पहले लोग घरों के दरवाजे खुले रखते थे। अब दरवाजे बंद करने पड़ते हैं वर्ना बंदर किसी भी वक्त घरों में घुस जाते हैं।

खाना बनाना पसंद है

लक्ष्मण कुमार

मैं बागेश्वर जिले में नामिक नाम के एक सुन्दर गाँव में रहता हूँ। इसी गाँव में 2001 में मेरा जन्म हुआ। परिवार में चार सदस्य हैं। हमारा परिवार बहुत अच्छा है। माँ खेतीबाड़ी के साथ ही परिवार की देखभाल करती है। मेरा छोटा भाई बारहवीं में पढ़ रहा है। मैं एक कम्पनी में काम करता था। नौकरी अच्छी चल रही थी लेकिन लॉकडाउन के कारण मुझे घर आना पड़ा।

गाँव में हमारे खेत हैं। हम खेतों में कई प्रकार की फ़सलें जैसे–गेहूँ, राजमा, चावल, आलू, गहत, भट्ट आदि उगाते हैं। घर में पाँच पालतू पशु हैं। इसमें दो बैल, दो गाय और एक कुत्ता शामिल हैं।

मैंने बारहवीं तक पढ़ा है। दसवीं तक गाँव में ही पढ़ाई की। गणित के सवाल हल करना बहुत अच्छा लगता था। इंटर में मुझे अर्थशास्त्र विषय सबसे अच्छा लगता था क्योंकि टीचर अच्छी तरह से समझाते थे। गाँव में सुविधा न होने के कारण मुझे इंटर करने मुनस्यारी जाना पड़ा। गाँव से गाड़ी की सड़क तक पहुँचने के लिये सत्ताइस किलोमीटर का पैदल सफर करना पड़ता है। फिर गाड़ी में बैठकर मुनस्यारी पहुँचते हैं।

सुबह से शाम तक मुझे बहुत काम करना पड़ता है क्योंकि परिवार में सदस्य कम हैं। सुबह नाश्ता बनाना, बर्तन धोना, झाड़ू लगाना आदि काम होते हैं। खेलकूद के लिये थोड़ा समय मिल जाता है। दिन में दो से पाँच बजे तक बच्चों का कम्प्यूटर सिखाने का काम होता है। मुझे सबसे अच्छा कार्य खाना बनाना लगता है। अपने जीवन में बहुत कुछ करने का मन है। अभी लॉकडाउन की वजह से कुछ नहीं कर पा रहा हूँ।

लॉकडाउन के बीच मुझे तेरह फरवरी से बच्चों को कम्प्यूटर सिखाने का मौका मिला। केन्द्र में बच्चों के बैठने के लिये बहुत अच्छी जगह है। यहाँ दो लैपटॉप रखे हैं। बच्चे टाइपिंग, पेंटिंग, कम्प्यूटर खोलना व बंद करना आदि कार्य सीख गये हैं। पहले वे खाली घूमते थे जिससे उनकी आदतें खराब हो रही थीं। आजकल उनका जीवन अच्छा हो गया है। मैं लॉकडाउन की वजह से बेरोजगार था। गाँव में कम्प्यूटर केन्द्र खुलने की वजह से मेरे दिन भी अच्छे गुजर रहे हैं।

रात में जानवर भगाने खेतों में जा रहे

अनामिका

मेरा गाँव पुडियाणी जिला चमोली में स्थित है। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग नौ हेक्टेयर होगी। हमारे गाँव में बाँज का वन क्षेत्र अधिक है। चीड़ का वन कम है। गाँव का पूरा वन पंचायती है। गाँव में चौरानब्बे परिवार निवास करते है। गाँव में गेहूँ, जौ, सरसों, धान, मडुआ, कोदों, काली दाल, मसूर की दाल, कोंणी, गहत की दाल, भट्ट, सोयाबीन, भंगीरा, जखिया आदि फसलें होती थीं। साथ ही, ग्रामवासी लौकी, कद्दू, सेमला, हरी सब्जी, मिर्च, धनिया, पिनालु, प्याज, आलू, ककोड़ा आदि सब्जियाँ लगाते थे। फलों में संतरा, नारंगी, नींबू, अमरूद आदि होते हैं।

गाँव में पहले जो भी फसलें बोई जाती थीं, वही आज भी बोई जाती हैं। ऐसी कोई भी फसल नहीं है जिस को लगाना छोड़ दिया हो। जंगली सुअर, भालू, हिरन फसलों को नुकसान तो पहुँचाते हैं पर ग्रामवासी रात में उन्हें भगाने के लिये खेतों में जाते हैं। वे अपने खेतों में ऐसी कोई वस्तु, जैसे पुतला, बना कर रखते हैं जिससे जंगली जानवर डर जायें।

गाँव में ज्यादातर महिलाएं आजीविका के नये साधन अपना रही हैं। इनमें सिलाई सेन्टर प्रमुख है। इसके अतिरिक्त हाथ से बुने हुए गर्म कपड़े भी बेच रही हैं। हाल ही में महिलाओं ने जंगल से लाये बुरांश के फूलों का जूस और संतरे का जूस बना कर बेचे। कुछ लोगों ने बुरांश के फूल बेच कर भी धन कमाया।

ग्रामवासी रात में मिलकर खेतों में जाते हैं व हल्लारोही करके जानवरों को दूर भगाने की कोशिश करते हैं। वे खेतों में पुतले बनाकर उन्हें डराते हैं। हाल ही में हमारे गाँव में गुलदार ने पाँच गायें मारी हैं। गुलदार लगभग हर हफ्ते एक गाय को मारता था। गाँव में गायों को चराने का जो स्थान (पोखरी) है वहाँ दोपहर में ही गुलदार ने गायें मार डाली। इस के लिये ग्रामवासियों ने अभी कोई कदम नहीं उठाया है।

ज्यादातर जंगली पशु खेतों को ही नष्ट करते हैं। जानवरों को लेकर ग्रामवासियों के मन में कोई भी डर नहीं है। कभी–कभी सुबह के समय गुलदार, भालू के आने से लोग डरते हैं क्योंकि पालतू पशुओं की गौशालाएं जंगल के

नजदीक हैं। गुलदार या भालू कभी भी लोगों पर हमला कर सकते हैं। इस कारण लोग अच्छी तरह सवेरा होने पर ही उस तरफ जाते हैं।

हमारे गाँव में जानवरों को लेकर बहुत सी परेशानियाँ हैं। ज्यादातर जंगली जानवर खेतों में फसलों को नष्ट करते हैं। इस कारण लोग पलायन कर रहे हैं। लोग अपने खेतों में बहुत मेहनत व लगन से काम करते हैं और जंगली जानवर उसे तहस–नहस कर देते हैं। इस कारण लोग परेशान रहते हैं। अगर समय से बारिश नहीं होती है तो बीज बचाने लायक भी अनाज नहीं बचता है। जलवायु में परिवर्तन होने के कारण या बारिश समय पर न होने से हमारे गाँव में गेहूँ की फसल का उत्पादन बहुत कम हो गया है। बारिश न होने पर लोग गेहूँ की फसल को काट कर पशुओं के लिये चारा के रूप में प्रयोग कर रहे हैं। मनुष्यों के खाने लायक वह होती ही नहीं है।

बंदरों को भगाने के लिये बारी लगायी

मीनाक्षी नेगी

मेरे गाँव का नाम चौण्डली है। गाँव में चीड़, बाँज, वन पंचायत आदि बहुत प्रकार के जंगल हैं। गाँव के नजदीक ही चीड़ और बाँज का एक घना क्षेत्र है। इस जंगल से हम छः महीने हरा और सूखा घास काटते हैं। गाँव में चीड़ का प्रयोग ईधन के लिए होता है। हमारा जंगल बहुत विस्तृत है। जंगल में अन्य गाँवों से भी लोग घास काटने के लिये आते हैं।

हमारे गाँव में साठ परिवार हैं। गाँव में रवी और खरीफ की फसलें होती है। पहले से फसलों और सब्जियों के उत्पादन में कोई अन्तर नहीं हुआ है। गेहूँ, जौ, धान (चावल), मडुआ, झंगोरा, सोयाबीन, गहत, राजमा, उड़द, रैंस, देसी दाल, तोर, काला भट्ट आदि का उत्पादन किया जाता है। सब्जियों में आलू, प्याज, टमाटर, लौकी, कद्दू, राई, पालक, मेथी, मटर आदि का उत्पादन करते हैं। फलों में पहले से थोड़ा अन्तर आया है। पहले आम के पेड़ नहीं थे, अब लगाये हैं। फलों में संतरा, गल्लर, नाशपाती, आड़ू, मेलू, काफल, तिमिल, नारंगी, केला आदि होते हैं।

कृषि के अलावा लोग पशु–पालन करके दूध का व्यापार कर रहे हैं। कुछ लोग मुर्गी–पालन करते हैं। कुछ लोग दुकान खोल कर जैसे–राशन की दुकान, जनरल स्टोर इत्यादि से धन अर्जित करते हैं। कुछ लोग मिस्त्री का काम करके आजीविका प्राप्त करते हैं। ग्रामवासी अपने स्तर पर जानवरों को भगाने के लिए बारी लगाते हैं। बंदरों को भगाने के लिए बारी–बारी से दोपहर में भी जाते हैं। चार परिवारों में से हर एक परिवार का एक व्यक्ति जाता है। ऐसे ही पूरे गाँव की बारी आती है।

जंगली सुअर, भालू, हिरन आदि को भगाने के लिए रात में भी इसी प्रकार से बारी लगती है। साथ ही, ग्रामवासी फसलों को बचाने के लिये अन्य तरकीबें लगाते हैं। वे खेतों के चारों ओर घेराबन्दी करते हैं। जैसे–तैसे गाँव वाले अपनी फसलों की सुरक्षा कर रहे हैं।

मेरा केन्द्र

गायत्री कैड़ा

मेरा एक छोटा सा परिवार है। इसमें माता–पिता, मैं और दो छोटी बहनें शामिल हैं। मैंने बारहवीं के बाद दो साल आई.टी.आई कम्प्यूटर में प्रशिक्षण लिया और फिर कॉलेज में प्रवेश ले लिया।

मैं सुबह पाँच बजे उठती हूँ। हाथ–मुँह धोकर चाय बनाती हूँ और माता–पिता को देती हूँ। घर की सफाई करती हूँ। नहाने–धोने के बाद नाश्ता बनाती हूँ। बर्तन धोने के बाद थोड़ी देर फोन चलाती हूँ। कभी–कभी कॉलेज का काम आ जाता है। थोड़ी देर घर वालों के साथ बैठने के बाद दिन के खाने की तैयारी करती हूँ। दिन का खाना माताजी बनाती हैं। खाना खाने के बाद बर्तन धोती हूँ। फिर घर के सभी लोग सो जाते हैं। मैं तीन बजे उठकर सबके लिये चाय बनाती हूँ। उसके बाद ग्राम शिक्षण केन्द्र में जाती हूँ।

मेरे शिक्षण केन्द्र में सत्रह बच्चे हैं। गर्मी के मौसम में शाम को चार बजे केन्द्र खोलती हूँ लेकिन शरद ऋतु में अंधेरा जल्दी हो जाता है। ठंड के मौसम में तीन बजे केन्द्र खोल देती हूँ। बच्चे जल्दी केन्द्र में आकर अंधेरा होने से पहले ही घर पहुँचना चाहते हैं। यह ठीक भी है क्योंकि जाड़ों के मौसम में जंगली जानवर गाँवों के आसपास आ जाते हैं। अंधेरा जल्दी होने पर उनका भय बना रहता है। बच्चे सुरक्षित घर पहुँच जायें तो अभिभावक भी खुश रहते हैं।

ग्राम शिक्षण केन्द्र

श्रीमती पुष्पा बिष्ट

मेरा जन्म सोमेश्वर इलाके में स्थित दियारी गाँव में हुआ। मैं वहाँ एक संयुक्त परिवार में अम्मा–बूबू, माता–पिता, ताई–ताऊ और अपने भाई–बहनों के साथ रहती थी। मेरी दो बहनें और एक भाई है।

मेरी पढ़ाई इंटर तक हुई जो मैंने राजकीय इंटर कॉलेज झुपुलचौरा से पूरी की। गृह–विज्ञान में सबसे ज्यादा रुचि थी। उसमें सिलाई, बिनाई, कढ़ाई, रसोई के काम और स्वच्छता के बारे में सिखाया जाता था। घर की स्थिति ठीक न होने के कारण आगे नहीं पढ़ सकी। 2010 में शादी हो गयी। पति दिल्ली में प्राइवेट जॉब करते हैं और हमारे दो बच्चे हैं। हमारे खेत घर से कुछ दूरी पर हैं। गाँव में धान की रोपाई की जाती है।

मैं सुबह चार–पाँच बजे उठती हूँ। गौशाला की साफ–सफाई, दूध दुह कर लाना, सास–ससुर को चाय–नाश्ता बनाकर देना आदि कार्य निपटा कर खेतों में काम करने जाती हूँ। ये काम हम बारह बजे तक करते हैं। दिन का खाना खाने के बाद खाली समय में पढ़ाई करती हूँ। फिर तीन बजे से शिक्षण केन्द्र में जाती हूँ। छुट्टी के दिन घास काटने के लिये जंगल और खेतों में जाती हूँ। वहाँ गाँव की अन्य महिलाएं भी आती हैं। बातचीत करते–करते कब घास काट ली, पता भी नही चलता।

कोविड–19 और प्रवासी

केदार सिंह कोरंगा

कोविड–19 वायरस से हमारे कार्यक्षेत्र के गाँवों में ही नहीं बल्कि बिचला दानपुर की इक्कीस ग्रामसभाओं में कोई भी व्यक्ति संक्रमित नहीं हुआ। बाहर से आये प्रवासी भी संक्रमित नहीं थे।

लॉकडाउन खुलने के बाद मलखा डुगर्चा, रातिर केठी ग्राम–सभा से अधिकांश प्रवासी महानगरों को लौट गये। कुछ लोग जो होटलों में काम करते थे, वे घरों में रहे। वे भी कुछ समय पश्चात् होटलों के खुलने पर शहरों की ओर लौट चले। मलखा डुगर्चा के रहने वाले श्री खड़क सिंह मेहता एवं श्री गोविन्द राम लॉकडाउन से पहले दिल्ली में एक होटल में कार्य करते थे। अब वे गाँवों में फेरी लगाकर कपड़े बेचने का कार्य कर रहे हैं। स्थिति सामान्य होने पर वे दिल्ली लौटना चाहते हैं। कुछ समय बाद सभी प्रवासी शहरों को लौट चले।

गोगिना ग्राम–सभा से भी अधिकांश प्रवासी महानगरों को लौट चुके हैं। कुछ लोग डी.आर.डी.ओ. गेस्ट–हाउस में कार्य करते थे। वे भी लौट चुके हैं। कुछ लोग स्थिति सामान्य होने पर शहरों को लौटना चाहते हैं। गोगिना के रहने वाले गोविन्द सिंह रौतेला एवं राम सिंह रौतेला लॉकडाउन से पहले दिल्ली में एक रेस्तरां में कार्य करते थे। अब उन्होंने गाँव में ही एक फास्ट–फूड रेस्तरां खोला है। वे कहते है कि गाँव में इतना काम है कि दिनचर्या ठीक से चल जाती है। ये दोनों गाँव में ही रहना चाहते हैं। चार लोग अपने पिता की दुकान में उनका हाथ बँटाते है। गोगिना में जो लोग शहरों से आये थे, वे वापस लौट चुके हैं। कुछ ही लोगों ने दुकान और होटल खोले। वे लोग गाँव में ही रहना चाहते हैं, आमदनी भी अच्छी है।

नामिक ग्राम–सभा से भी अधिकांश प्रवासी महानगरों को लौट चुके हैं। कुछ लोग स्थिति सामान्य होने पर शहरों को लौटना चाहते हैं। नामिक के रहने वाले कुन्दन राम एवं नरेश राम गाँव में मिस्त्री का कार्य करते थे। गाँव में हमेशा काम न मिलने के कारण ये दिल्ली चले गये थे। वहाँ एक होटल में कार्य करते थे। लॉकडाउन में गाँव वापस आकर एक मकान में मिस्त्री का कार्य करने लगे। ये कहते हैं कि गाँव में नियमित काम मिलना मुश्किल होता है। परिवार का भरण–पोषण कैसे किया जाए?

पहाड़ों में जनसंख्या वृद्धि के कारण पलायन की समस्या बढ़ती चली गयी है। ग्रामीण इलाकों में कृषि एवं पशुपालन मुख्य व्यवसाय रहे हैं। इसके बाद लोग मजदूरी और सरकारी नौकरी के द्वारा जीविकोपार्जन करते हैं। गाँवों में सबसे ज्यादा पलायन पच्चीस से पैंतीस वर्ष के युवाओं ने किया है। यह पलायन रोजगार व अच्छी शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा की वजह से हुआ है।

दीपावली के बाद वापस आए प्रवासी फिर से रोजगार के लिए शहरों का रूख करने लगे थे। फर्क बस इतना रहा कि बसों व ट्रेनों के चलने से सड़कों पर पहले की तरह भीड़ नहीं दिखायी दी। गाँवों में रह रहे कुछ लोग मजदूरी करने लगे किन्तु वह भी सीमित था। जिस कारण लोग स्थिति सामान्य होने पर रोजगार के लिए महानगरों का रूख करना चाह रहे थे।

गोगिना गाँव की निवासी सीता का परिवार लॉकडाउन से पहले दिल्ली में रहता था। उसके पिता वहाँ एक होटल में कार्य करते थे। सीता कहती है कि लॉकडाउन के कारण पिता जी का रोजगार बन्द हो गया। उनका परिवार गाँव वापस आ गया। स्थिति सामान्य होने पर पिताजी शहर में रोजगार के लिए वापस चले गये। परिवार के अन्य सदस्य घर पर ही रहे। सीता ने शहर से बी. कॉम प्रथम किया है तथा कम्प्यूटर केन्द्र में बच्चों को प्रशिक्षित करती है। नित्य प्रातः नौ बजे से गाँव के पन्द्रह बच्चों को ट्यूशन पढ़ाती है। ढ़ाई से साढ़े चार बजे तक कम्प्यूटर केन्द्र चलाती है।

भविष्य की अनिश्चितता अभी भी बनी हुई है। किसी को पता नहीं कि पुनः कोरोना या उस जैसी कोई अन्य महामारी आने पर क्या होगा। गाँवों में कृषि, पशुपालन, सड़क, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य जैसी वास्तविक समस्याओं पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

ग्रामवासी जंगली जानवरों को भगा रहे

रेखा रावत

मेरे गाँव का नाम चौण्डली है। यह चमोली जिले के कर्णप्रयाग ब्लॉक में आता है। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग छः हेक्टेयर होगी। गाँव में वन पंचायत का जंगल है। साथ ही एक बहुत बड़ा चीड़ का सरकारी जंगल है। इस जंगल में घास होती है। गाँव की स्त्रियाँ जंगल से बरसात में हरी घास और अश्विन माह में सूखी घास लाती हैं। गाय–बैल घास चरने के लिये चीड़ के जंगल में जाते हैं। मकान बनाने के लिए इमारती लकड़ियाँ भी चीड़ के जंगल से लायी जाती हैं। वन पंचायत की भूमि में बाँज के पेड़ लगे हैं। बाँज के अतिरिक्त बुरांश और काफल के पेड़ हैं। गाँव का जंगल साल में दो बार सभी ग्रामवासियों और सरपंच की सहमति से खुलता है। तब वहाँ से लोग चारा–पत्ती के लिए बाँज लाते हैं। इसके अलावा बाँज के जंगल से कृषि के औजार बनाने के लिए लकड़ी लाते हैं। पशुओं के बिछावन के लिए सूखी पत्तियाँ लाते है। एक अन्य जंगल है। वहाँ पर कोई कभी भी जा सकता है। इसमें झाड़ियाँ और पेड़ों की अनेक प्रजातियाँ हैं। झाड़ियों में कुँज, किलमोड़, हिसोल, काला–बाँस आदि शामिल हैं। पेड़ों में बाँज, बुरांश, अयांर, कडी, भमोरा, फलियाँट, दाल चीनी, देवदार, काफल आदि हैं। चारा पत्ती के लिए लोग रोज इन पेड़ों का उपयोग करते हैं। ईंधन के लिए सूखी लकड़ी भी लाते हैं।

गाँव में परिवारों की संख्या साठ है। पहले की फसलों, फलों और सब्जियों में धान, गेहूँ, जौ, मडुआ, झंगोरा, भंगीरा, तिल, सरसों, चौलाई और कई प्रकार की दालें शामिल थीं। फलों में माल्टा, आड़ू, नाशपाती, केला, नारंगी आदि हैं। लौकी, कद्दू, मूली, तोरई, बीन्स, पिनालू, करेला आदि सब्जियाँ खूब होती हैं। बंदर, जंगली सुअर, भालू, हिरन से नुकसान तो बहुत हो रहा है तथापि ग्रामवासियों ने फल, सब्जी और फसलें लगाना छोड़ा नहीं। वे जंगली जानवरों को भगाने का लगातार प्रयास करते हैं क्योंकि ये सभी फसलें बर्बाद कर रहे हैं।

पहले गाँव में प्याज नहीं लगाते थे। अब आलू, प्याज, मटर और कभी–कभी गोभी भी लगाते हैं। गाँव में पाँच लोग कृषि के अलावा अन्य साधनों से आजिविका चला रहे हैं। कुछ लोगों की दुकानें हैं। इसके साथ ही, गाँव से एक व्यक्ति सभी ग्रामवासियों का दूध बाजार में ले जाता है। कुछ लोगों ने मुर्गी–पालन भी किया है। गाँव में पुरूषों और महिलाओं के लिए आजीविका के अधिक स्रोत नहीं हैं।

जंगली जानवरों के लिए शासन–प्रशासन कुछ खास कार्य नहीं कर रहा है। उनकी तरफ से ग्रामवासियों के लिये कोई मदद नहीं आ रही है। ग्रामवासी अपने स्तर से जंगली जानवरों को भगा रहे हैं। बन्दरों और लंगूरों को भगाने के लिए चार–चार लोगों की बारी लगाई है। जब गाँव में अधिक जानवर आ जाते हैं तो सभी ग्रामवासी मिलकर उन्हें गाँव के बाहर खदेड़ देते हैं। जंगली सुअरों के झुंड, भालू, हिरन इत्यादि को भगाने के लिए रात को दस परिवारों में से एक–एक व्यक्ति पहरेदारी के लिये जाता है। यह टीम पूरे गाँव के खेतों में घूमती रहती है। जानवरों को खेतों में न आने देने की पूरी कोशिश करती है। कभी वर्षा होने के कारण लोग खेतों में नहीं जाते हैं तो जंगली जानवर बहुत नुकसान करते हैं। कभी तो कटा हुआ धान, जो किसी एक जगह पर एकत्रित किया हुआ होता है, उसे भी उलट–पुलट कर देते हैं।

गुलदार ने गाँव में तो कोई जनहानि नहीं की। कुछ वर्ष पहले जब गायें जंगल में चरने के लिये जाती थीं तो कभी देर हो जाने पर गुलदार रास्ते में गायों को मार देते थे। वर्तमान में कभी रात में कुत्तों को उठा ले जाते हैं। पाँच गाय–बैल भी मारे हैं। वैसे तो गाँव में रात को भी लोग आते–जाते रहते हैं। ऐसा कोई डर नहीं है। परन्तु जंगली जानवरों के कारण खेतों और सब्जी, फलों को अत्यधिक हानि हो रही है।

फसलों की विविधता में कमी

सुमन नेगी

मेरे गाँव काण्डई, जिला चमोली, में अधिकतर मिश्रित वन हैं। जंगल में मुख्य रूप से बाँज, बुरांस, काफल, भंगियार, उतीस आदि के वृक्ष पाये जाते हैं। गाँव में परिवारों की संख्या पैंतालीस है और जमीन छः सौ नाली के लगभग है। आज से करीब दस–पन्द्रह वर्ष पूर्व गाँव में सब्जी का अच्छा उत्पादन होता था। ग्रामवासी आलू, प्याज, बैंगन, टमाटर, कद्दू, लौकी, तोरई इत्यादि सब्जियाँ लगाते थे। साथ ही हरी सब्जियों की अच्छी पैदावार होती थी। खरीफ की फसल में धान, बाजरा, तिलहन, अल्प मात्रा में कोंणी तथा मडुआ के साथ दलहनीय फसलें जैसे गहत, भट्ट, मसूर, सोयाबीन, काली दाल आदि उगाई जाती थी। रबी की फसलों में गेहूँ, जौ, सरसों आदि मुख्य थे।

वर्तमान समय में जंगली सुअर, बंदरों, हिरनों के द्वारा फसलों को काफी नुकसान पहुँचाया जाता है। कई खेत ऐसे हैं जहाँ बीज तो बोया जाता है लेकिन कुछ भी प्राप्त नहीं होता। हिरन अथवा जंगली गाय द्वारा उसे पहले ही खा कर खत्म कर दिया जाता है, कुछ भी नहीं बचता। इस वजह से ही लोगों ने अधिकांश खेत बंजर कर दिये हैं। फसलों की विविधता में कमी आयी है। धान के साथ तिलहन, कोंणी अब कोई नहीं बोता। मडुवे के साथ दालें भी बहुत कम बोई जाती हैं क्योंकि फसल पकने के पहले ही बंदर दालों को नष्ट कर देते हैं।

घरों में साग–सब्जी का उत्पादन भी कम हो गया है। घरों के दरवाजो तक बंदर आते रहते हैं। आजीविका के लिए कृषि उत्पादन की मात्रा लगभग शून्य है। ग्रामीणों द्वारा पशुपालन कर के दुग्ध–व्यवसाय किया जा रहा है। आजीविका का यही मुख्य साधन है। साथ ही सरकारी योजनाओं के तहत लोग रोजगार गारंटी में कार्य कर रहे हैं। लोगों द्वारा अपनी बातें उचित तरीके से शासन–प्रशासन तक नहीं पहुँचायी जा रही हैं। दूसरी ओर जन–शिकायतों पर किसी भी प्रकार की कोई कार्यवाही भी नहीं हो रही। शासन–प्रशासन इस समस्या पर जरा भी ध्यान नहीं दे रहा।

अपने स्तर पर गाँव में महिला मंगल दलों द्वारा फसलों के पकने के समय दिन में बंदरों को भगाने की बारी लगायी जाती है। ग्रामवासी कभी रात्रि में

जंगली सुअरों को भगाने के लिये खेतों में जाते हैं। अधिकतर लोग सोचते हैं कि सरकारी राशन मिल जायेगा तो खेतों में मेहनत क्यो करें?

पहले गाँव में गुलदार और भालू का डर बना रहता था। गुलदार रात को कुत्ते तथा अन्य आवारा पशुओं का शिकार करते थे परन्तु जब से गाँव में सड़क आयी है, करीब दस वर्षों से, ऐसी घटनाएं नहीं हुई हैं। अब ग्रामवासी रात को भी घर से बाहर आते–जाते रहते हैं। गाँव के रास्ते में बिजली जलती रहे तो इस वजह से भी जंगली पशुओं की आवाजाही पर रोक लगती है परंतु खेतों में यह व्यवस्था संभव नहीं है। जंगली जानवरों के कारण खेती को सबसे ज्यादा नुकसान हो रहा है। इसमें बंदर, सुअर, सरो (नीलगाय), हिरन, भालू आदि पशु शामिल हैं।

सिलाई

सुनीता आर्या

मैं उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान अल्मोड़ा में 2015 से जुड़ी हूँ। शुरूआत में अपने गाँव नामिक में ग्राम शिक्षण केन्द्र चलाती थी। शिक्षण केन्द्र गाँव के पंचायत घर में चलता था। अभी भी वहीं पर चलता है। जब मैंने अपने गाँव में केन्द्र खोला तो अठ्ठाइस बच्चे आते थे। शिक्षण केन्द्र का बच्चों के साथ–साथ गाँव की महिलाओं एवं किशोरियों से जुड़ाव बना रहता है। गाँव में हर माह महिलाओं की गोष्ठी होती है।

ग्राम शिक्षण केन्द्र के माध्यम से पूरे गाँव के साथ हमारा जुड़ाव है। हर दिन स्कूल की छुट्टी के बाद बच्चे सीधे केन्द्र में आते हैं। पहले की अपेक्षा गाँव में अनेक परिवर्तन आये हैं। गाँव में हर माह किसी एक विषय को लेकर महिलाओं की गोष्ठी होती है। संगठन के माध्यम से गाँव में अनेक परिवर्तन हुए हैं। जैसे–शराब में कमी, रास्तों की सफाई, खेतों से जानवरों और बन्दरों को भगाने के लिये चर्चा करना, बारी लगाना आदि। महिलाओं द्वारा कोष जमा किया जाता है। गाँव में किसी परिवार को पैसों की जरूरत हो तो महिला संगठन मदद करता है। शादी–विवाह और पूजा–पाठ में भी संगठन योगदान देता है।

मैं इस संस्था के माध्यम से अक्टूबर 2018 में श्री अरबिन्दो आश्रम, दिल्ली, गयी। वहाँ पर हमें छः माह का वोकेशनल कोर्स करवाया गया। वहाँ पर अलग–अलग राज्यों से बच्चे आते हैं। वे सभी प्रशिक्षण लेकर बेहतरीन करियर का रास्ता खोल सकते हैं। वहाँ पर हमें अनेक गतिविधियाँ करवायी जाती थीं। वोकेशनल कोर्स पूरा होने के बाद घर की परिस्थितियों के कारण वापस आना पड़ा। हम लोग आठ अप्रैल 2019 को घर वापस आये। मैं गाँव में लौट कर पुनः ग्राम शिक्षण केन्द्र से जुड़ गयी। इस के बाद संस्था के माध्यम से ग्राम सभा गोगिना और आसपास के गाँवों की महिलाओं तथा किशोरियों को सिलाई सिखाने लगी। शुरूआत में तीस से ज्यादा महिलाएं सिलाई सीखने के लिये आयीं। ठंड का मौसम आया तो महिलाओं की संख्या कम हो गयी।

मैंने सर्वप्रथम महिलाओं को सिलाई की मशीन के बारे में बताया। उसके बाद तुरपन, बटन–काज, हुक, सीधी सिलाई, बाबासूट, समीज, पेटिकोट, सादा सलवार, पटियाला सलवार, पेंट कट, धोती सलवार, ब्लाउज, सादा फ्रॉक, अम्ब्रेला फ्रॉक, सूट आदि सिलना सिखाया। इनमें से अधिकतर महिलाएं सिलाई का काम सीख चुकी हैं। वे पैसे भी कमाने लगी हैं। इसके बाद ग्राम–सभा नामिक की महिलाओं एवं किशोरियों को सिलाई सिखा दी। संस्था के माध्यम से ग्राम नामिक में सिलाई सेंटर खोला गया तो शुरूआत में तीस महिलाएं आयीं। जो महिलाएं सिलाई सीख चुकी हैं, वे अपने कपड़े खुद सिलती हैं। अब केन्द्र में नये प्रशिक्षार्थी आ रहे हैं। उन्हें शुरूआत से प्रशिक्षित कर रही हूँ।

वर्तमान में उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान, अल्मोड़ा में कम्प्यूटर का प्रशिक्षण लेकर ग्राम नामिक में कम्प्यूटर केन्द्र भी चला रही हूँ।

कृषि कम, दुग्ध उत्पादन पर ध्यान

मानसी बिष्ट

मेरा गाँव चमोली जिले में स्थित है। इस का नाम कठूड़ है। गाँव के आसपास बाँज का जंगल है। गाँव में कुल चौबीस परिवार रहते हैं। पहले फसलों में गेहूँ, धान, ज्वार और सब्जी में आलू, टमाटर, कद्दू, प्याज, लौकी, राई, भिन्डी, मटर, बींस, गोभी लगाते थे। फलों में संतरा, आड़ू, प्लम, नारंगी, अखरोट आदि होते थे। अब बंदरों के कारण मक्का लगाना छोड़ दिया है। सुअरों के कारण धान कम उगाते हैं। भालू के कारण आलू लगाना छोड़ दिया। अब हिरन के कारण हरी, नरम सब्जियाँ भी कम उगाते हैं।

गाँव के बहुत से लोग कृषि के अलावा दूध उत्पादन में अधिक ध्यान दे रहे हैं। पुरूषों और महिलाओं के लिए आजीविका के नये स्रोत हुए हैं। पशु–पालन, मुर्गी–पालन, मजदूरी, घास बेचना आदि कुछ ऐसे व्यवसाय हैं जिनसे लोगों को आय मिल रही है।

जंगली जानवरों की तरफ शासन–प्रशासन का कुछ ज्यादा ध्यान नहीं है। ग्रामवासी ही जानवरों को भगाते हैं। ग्रामवासी अपने स्तर पर अलग–अलग टोलियाँ बनाकर खेतों से जानवरों को भगा रहे हैं। पुरूषों की अलग टोली बना रहे हैं और महिलाओं की अलग टोली बनायी जाती है। सभी टोलियाँ बंदर, जंगली सुअर, हिरन, स्याही आदि पशुओं को भगाने में सहयोग देती हैं। ग्रामवासी रात को घर से बाहर नहीं आते हैं। रात में जंगली जानवरों का भय बना रहता है। जंगली जानवर रात को इधर–उधर घूमते रहते हैं।

जंगली जानवरों के कारण लोगों ने खेती करना कम कर दिया है। अब पहले जैसे खेती नहीं होती है। जानवर सब खेती चौपट कर देते हैं। इससे लोगों की मेहनत बेकार जाती है। पहाड़ों में जंगली जानवरों की परेशानी बहुत बड़ी है। इस परेशानी का निदान कुछ नहीं निकल रहा। संस्थाएं एवं गाँवों के महिला संगठन इस समस्या को विभिन्न मंचों से उठा रहे हैं लेकिन कोई सुनवाई नहीं हो रही।

जंगली जानवरों से परेशानी

नीता बिष्ट

हमारे गाँव का नाम ग्वाड़ है। ग्वाड़ गाँव, गोपेश्वर से पाँच किमी की दूरी पर स्थित है। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग हजार नाली होगी। हमारे गाँव में मुख्य रूप से धान, गेहूँ, मडुआ, झंगोरा तथा सरसों की खेती की जाती है। गाँव में बाँज का जंगल है। बाँज के अलावा यहाँ अन्य प्रकार के पेड़ भी पाये जाते हैं। इसमें सबसे अधिक उतीस के पेड़ हैं। जंगल बहुत घना है। हमारे गाँव में कुल एक सौ अस्सी परिवार हैं।

पहले गाँव में धान, गेहूँ, चौलाई, मडुआ, झंगोरा, तिल, गहत, सरसों, मक्का, जौ, काली दाल, भंगजीरा आदि फसलें उगाते थे। इसके अतिरिक्त आलू, मूली, बैंगन, मटर, राई, धनिया, कद्दू, लौकी, पालक, टमाटर, आदि सब्जियाँ होती थीं। फलों में माल्टा, नींबू, नारंगी, आड़ू, नाशपाती, अखरोट, अमरूद, केला आदि होते थे। अब बंदर, भालू, हिरन, जंगली सुअरों के कारण लोगों ने आलू, चौलाई, काली दाल, अखरोट लगाना छोड़ दिया है। अन्य फसलें उगाते तो हैं लेकिन भालू और सुअर सब नष्ट कर देते है। मक्का तथा कद्दू खाने के लिए भालू घर के पास ही बगीचों में आ रहे हैं। गाँव के ऊपर घर से दूर बने खेतों में फसल केवल बोने तक ही सीमित है। काटने के समय पर वहाँ कुछ नहीं मिलता। इस कारण लोग बहुत परेशान हैं। अब तो लोग इन खेतों को बंजर छोड़ दे रहे हैं। उन का कहना है कि जब अनाज कुछ मिल नहीं रहा है तो इससे अच्छा हम खेत से घास ही काटेंगे।

गाँव में अनेक लोग आजीविका के लिए कृषि के साथ दुग्ध उत्पादन, मुर्गी, भेड़–बकरी पालन आदि व्यवसाय अपना रहे हैं। वे खुश भी हैं। जंगली जानवरों के लिए शासन, प्रशासन का दृष्टिकोण यह है कि कोई भी व्यक्ति जानवरों को हानि न पहुँचायें। एक दिन वन–विभाग से फॉरेस्ट गार्ड तथा रेंजर हमारे गाँव में आये थे। वे कह रहे थे कि जंगली जानवरों को गाँव से भगाने के लिए कुछ करेंगे लेकिन अभी तक कुछ सोचा नहीं है।

अब पुरूषों और महिलाओं के लिए आजीविका के नए स्रोत बन रहे हैं। जैसे चारधाम यात्रा के शुरू होने से लोगों ने सड़कों के किनारे वाले खेतों में होटल तथा दुकानें बनायी हैं। कुछ लोगों ने रूद्रनाथ जाने वाले रास्ते में चाय–पानी की दुकानें खोली हैं। इससे अच्छी कमाई हो जाती है। यात्रियों के साथ गाइड

बनकर रूद्रनाथ जाना भी पुरूषों के लिए आय–सृजन का एक स्रोत है। महिलाओं के लिए आजीविका के नए स्रोतों में सिलाई, बिनाई, सब्जी उगाना आदि काम हो रहे हैं।

ग्रामवासी अपने स्तर पर जानवरों को भगाने के लिए रात में कंटर बजाते हैं। कोई शंकुरा बजाते हैं। रात में ग्यारह–बारह बजे पटाखे फोड़ते हैं। रात में

जानवरों के खेतों में आने पर हल्ला मचाते हैं। जनवरी 2022 में हमारे गाँव में भालू ने एक महिला पर हमला किया। वह महिला घास काटने गई थी। वह बहुत हिम्मतवाली स्त्री है। उसने भालू से स्वयं को बचाया। उसे काफी चोट भी आयी थी परंतु जान बच गयी। गुलदार ने गाँव में छः बछड़ों तथा एक बैल को मारा है। रात को बहुत कम लोग घर से बाहर जाते हैं क्योंकि रात में भालू और गुलदार का डर रहता है।

जंगली जानवरों के कारण लोग अपनी गाय, भैंस जंगल में चराने के लिए नहीं भेज पा रहे। इस के अलावा लोग अब खेतों में अधिक ध्यान नहीं देते हैं। कई लोगों ने खेती करना छोड़ दिया है। इस का मूल कारण यही है कि जंगली जानवर खेती को पूर्णतया नष्ट कर देते हैं। महिलाएं खेतों में मेहनत करती हैं पर जंगली पशुओं के कारण उस श्रम का कोई फल नहीं मिलता। गाँव में सभी लोग जंगली पशुओं के उत्पात के कारण परेशान रहते हैं। इस समस्या का निदान नहीं होगा तो पहाड़ो में खेती पूरी तरह से चौपट हो जायेगी।

जंगली जानवरों पर ग्रामीणों की सोच

प्रेमा रावत

विगत कई वर्षों से देखा गया है कि गाँवों में जंगली जानवरों का आना–जाना अधिक हो रहा है। इस कारण ग्रामवासियों को अनेक प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है। सबसे अधिक दिक्कत किसानों को है। जंगली जानवर फसलों को नष्ट कर रहे हैं तथा मवेशियों पर भी जानलेवा हमला कर देते हैं। ग्रामवासियों में जंगली जानवरों का भय बना हुआ है तथा रात को घर से बाहर निकलना मुश्किल है।

मैं अपने गाँव के आधार पर यह बता सकती हूँ कि जंगली जानवरों द्वारा हो रहे नुकसान से ग्रामीणों की सोच पर बहुत प्रभाव पड़ रहा है। मेरे गाँव का नाम बणद्वारा है। गाँव में खेती की भूमि करीब तीन सौ बासठ हेक्टेयर होगी। गाँव में बाँज के जंगल हैं। जंगल वन–पंचायत के अधीन हैं। वन–पंचायत से समय–समय पर ग्रामवासी चारा, ईंधन लेते हैं।

बणद्वारा गाँव में लगभग सत्तासी परिवार निवास करते हैं। अधिकतर ग्रामवासी पहले सिर्फ कृषि पर निर्भर थे। वे खान–पान का अधिकतम सामान खेतों से ही प्राप्त करते थे। इसमें अनाज, दालें, सब्जी, फल आदि शामिल थे। विगत कुछ वर्षों से गाँव में जानवरों का अतिक्रमण बढ़ गया है। जानवर फसलों का नुकसान कर रहे हैं। बंदरों और जंगली सुअरों के झुंडों ने अधिक आतंक मचा रखा है। बंदर दिन में तो जंगली सुअर और हिरन रात को उत्पात मचा रहे हैं। इस कारण ग्रामवासियों ने मौसमी फल–सब्जियाँ उगाना छोड़ दिया है। ग्रामवासी अन्य व्यवसायों की ओर रूख कर रहे हैं। जैसे वे मुर्गी–पालन, मत्स्य–पालन, रिंगाल–उद्योग, दुग्ध–उद्योग, चक्की आदि नये आजीविका के साधनों को अपना रहे हैं।

जंगली जानवरों का प्रवेश रोकने के लिए सरकार द्वारा गाँव की सीमा में चारों तरफ से चारदीवारी बनाने के अलावा अन्य कोई कार्य नहीं किया गया है। शिकायत करने पर भी सरकार एवं प्रशासन का कोई उत्तर नहीं मिल रहा है। इस कारण पहाड़ों में खेती का स्तर कम हो गया है। लोग उन्हीं खेतों में फसलें बो रहे हैं जो उनके घरों के आस–पास हैं। ग्रामवासी घर के पास वाली फसल की देखभाल आसानी से कर सकते हैं। इस तरह जंगली जानवरों से फसलों को बचाया जा रहा है।

कृषि से लाभ नहीं मिल रहा

स्मिता बिष्ट

मेरे गाँव का नाम सिरोली है। यह गाँव चमोली जिले में गोपेश्वर मुख्यालय के पास स्थित है। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग पाँच सौ नाली होगी। गाँव में बाँज का जंगल है। सिरोली में एक सौ इकसठ परिवार निवास करते हैं। पहले धान, बाजरा, गोभी, आलू, संतरे, केले जैसी फसलें गाँव में उगाई जाती थीं परन्तु अब स्थिति बदल गई है। बंदरों के आतंक के कारण तैयार फसल बेवक्त ही नष्ट हो जाती है। जंगली सुअरों के झुंड जमीन के अंदर उगने वाली फसलों को भी नष्ट कर देते है। भालू खेतों में आ कर मक्का, मडुआ की फसलें नष्ट कर देते हैं। इस के अतिरिक्त छोटी–छोटी फसलें को उगते ही हिरन चरने लग जाते हैं। इस कारण ग्रामवासी अत्यंत परेशान रहते हैं।

गाँव में कृषि से लोगों को कोई लाभ नहीं मिल रहा है। इस कारण लोग आजीविका के लिये कृषि के अलावा अन्य साधनों को अपना रहे हैं। ज्यादातर लोग गाँव से पलायन कर के कोई अन्य कार्य कर रहे है। गाँव में कुछ लोग दुग्ध–व्यवसाय एवं मजदूरी के साथ–साथ थोड़ा कृषि का काम कर लेते है। कुछ पुरूषों ने आजीविका के लिए दुकानें, होटल आदि खोले हैं। कुछ लोग पलायन करके कम्पनियों में कार्य कर रहे हैं। महिलाओं ने दुग्ध–व्यवसाय, सिलाई, बिनाई जैसे आजीविका के नये साधन अपनाए हैं।

प्रशासन द्वारा गाँव की खेती वाले हिस्सों में कँटीले तारों की घेर–बाड़ करवाई गई है परंतु यह उपाय खेतों को पूरा संरक्षण नहीं दे पाता। जंगली जानवर अन्य किसी रास्ते से गाँव में आ जाते हैं। ग्रामवासी अपनी ओर से बंदरों व अन्य जानवरों को भगाने का प्रयास करते हैं। फसल काटने के समय हर परिवार से बंदरों की चौकीदारी करने के लिये बारी लगी रहती है। रात को गाँव की महिलाएं व पुरूष जानवरों को भगाने के लिये खेतों में जाते हैं।

सिरोली गाँव के आसपास गुलदार या भालू ने किसी प्रकार के कोई हमले नहीं किये हैं। हमारे गाँव में बाहर आने–जाने में भय नहीं है। गाँव के लोग रात को अपने घर से बाहर निकल सकते हैं। वे ख्याल रखते हैं कि घर के बाहर रोशनी हो, बिजली जलती रहे। इससे जंगली जानवर मकानों के नजदीक नहीं आते।

उपरोक्त लेख में जंगली जानवरों के कारण होने वाली परेशानी को बता दिया गया है। लेख में जानवरों के कारण उत्पन्न हुई विपरीत परिस्थितियों का वर्णन किया गया है।

दालें बोना कम कर दिया

पूनम रावत

मेरे गाँव का नाम काण्डई है। गाँव में खेती की कुल जमीन लगभग छः सौ नाली होगी। काण्डई गाँव में अधिकतर बाँज, बुरांश का जंगल है। गाँव के एक तरफ, बमियाला गाँव को जाने के रास्ते में, चीड़ का जंगल भी है। हमारे गाँव में कुल पैंतालिस परिवार रहते है।

पहले सब्जियों में मटर, आलू, प्याज अधिक लगाते थे। फसलों में दालें यथा गहत, रैंस, काली दाल अधिक होती थी। अब जंगली सुअर, बंदर, लंगूर, भालू आदि पशुओं के कारण दालें बोना कम कर दिया है। अब गहत लगाना भी बहुत कम हो गया है। ज्यादातर जंगली जानवर दूर जंगलों में ही रहते हैं परंतु रात को काकड़, बारहसिंगा, सराऊ गाय के कारण खेती को बहुत नुकसान हो जाता है। गाँव में लगभग सभी बेरोजगार आजीविका के अन्य साधनों को अपना रहे हैं।

पहले तो गाँव की सभी महिलाएं और पुरूष खेती पर ही निर्भर थे लेकिन अब खेती के साथ–साथ अन्य व्यवसाय कर रहे हैं। जैसे–दुग्ध डेयरी, मनरेगा में काम करना इत्यादि। कई महिलाएं सिलाई का कार्य भी कर रही हैं। कुछ महिलाएं संस्थाओं में कार्यरत हैं।

जंगली जानवरों के लिए शासन–प्रशासन से ग्रामवासी भी शिकायत नहीं करते हैं। अगर कभी–कभी कुछ ऐसी घटना होती है, जैसे किसी पशु पर हमला हो जाये तो वन–विभाग के अधिकारी तुरन्त आ जाते हैं। ग्रामवासी अपने स्तर पर जंगली जानवरों को भगाने के लिए अनेक उपाय कर रहे हैं। जैसे–बंदरों और लंगूरों को भगाने के लिए प्रत्येक परिवार से बारी लगायी जाती है। रात के समय जंगली सुअरों के झुंड को भगाने के लिये पूरे गाँव से हर परिवार से एक–एक सदस्य चौकीदारी में जाते हैं।

महिला संगठन

माया जोशी

गोड़गाँव पारकोट ग्राम सभा का एक तोक है। इस तोक में तीस परिवार रहते हैं। गोड़गाँव में महिलाओं का सक्रिय संगठन है। तीस परिवारों में पचास से अधिक महिलाएं हैं। गोड़गाँव की खास बात यह है कि सभी परिवार गाँव में ही रहते हैं। गाँव में एक भी घर बन्द नहीं है। यह गाँव बिन्ता की बाजार से पाँच किलोमीटर की दूरी पर है। अब तो गाँव में सड़क चली गयी है। गाँव की महिलाएं एकजुट होकर कार्य करती हैं। खेती का कार्य भी सभी महिलाएं मिलजुलकर पूरा करती हैं। जब कभी किसी महिला को दुःख–बीमारी हुई तो उसका कार्य भी कर देती हैं।

महिला संगठन ने बन्दरों व जंगली सुअरों को भगाने के लिए बारी लगायी है। गाँव में नशा और अपशब्दों के प्रयोग पर पाबंदी लगायी गयी है। गाँव के बीच में हरज्यू का मंदिर है। महिलाएं समय निकाल कर हर मंगलवार को भजन–कीर्तन करती हैं। महिलाओं का कहना है कि पुरूष तो अपने लिए कभी भी समय निकाल लेते हैं। हम भी कभी समय निकाल कर अपनी पसंद के कार्य करें। जब फसल काटने का वक्त आता है तो महिलाएं बारी–बारी से सबका काम करती हैं। गाँव में कोई शादी–विवाह होता है तो पूरा सहयोग देती हैं।

गोड़गाँव संगठन की अध्यक्षा एक सक्रिय महिला हैं। गाँव में कच्ची लकड़ी, बाँज काटने पर रोक लगाई है। गाँव में फेरी वाले व किन्नरों के आने पर भी अनुमति लेनी होती है। कोई भी अपरिचित आदमी आता है तो सभी महिलाएं उससे पूरी पूछताछ करती हैं। गाँव में गाय चराने की बारी लगायी गयी है। दो परिवार एक दिन गाय चराने जाते है। इसी तरह से पन्द्रह दिन के बाद एक परिवार की बारी आती है।

एक बार सिंचाई के टैंक में मिट्टी भर गयी थी। महिलाओं ने मिलकर साफ कर दी। अब सभी लोग आराम से सिंचाई करते हैं। आग लगने पर सभी महिलाएं जंगल में जाती हैं। जंगल को आग से बचाने का पूरा प्रयास करती हैं। वन–विभाग से प्रोत्साहन राशि मिली तो महिला–कोष में जमा कर दी। गाँव के पुरूष भी महिलाओं को पूरा सहयोग देते हैं।

गाँव में सभी लोग खेती का कार्य करते हैं। सभी के खेतों में साल भर के खाने के लिये गेहूँ, चावल व कुछ दालें हो जाती है। कुछ लोग चावल बेचते भी हैं। सब्जियों में गडेरी, प्याज, लहसुन व हरी सब्जियाँ खाने भर के लिए हो जाती हैं।

कब मिलेगी जंगली जानवरों से निजात

हंसी डसीला

रूंगड़ी महिला संगठन 2002 से गाँव में महिलाओं को संगठित करते हुए विकास के कार्यों में उनकी भागीदारी बढ़ाने और ग्रामवासियों की छोटी–बड़ी समस्याओं को सामुहिक रूप से सुलझाने का प्रयास करता आ रहा है। संगठन प्रति माह बैठक करता है। बैठक में सभी लोग अपनी बात रखते हैं और सामुहिक निर्णय लेते हैं। महिला संगठन को लोकतांत्रिक तरीके से चलाया जाता है। प्रत्येक तीन साल के बाद कार्यकारणी में बदलाव किया जाता है। इससे नये लोगों को संगठन के नेतृत्व का अवसर मिलता है।

महिला संगठन द्वारा इन वर्षों में कई कार्य किये गये। जैसे, ग्राम–कोष में कुछ धनराशि जमा कर के सामुहिक उपयोग की सामग्री खरीदना, मुक्त चराई पर पाबंदी, वृक्षारोपण, श्रमदान करके रास्ते व जलस्रोतों की सफाई का कार्य, टैक्सी–चालकों द्वारा बढ़ाये गये किराये के विरोध में प्रदर्शन एवं उस पर रोक, महिलाओं के नेतृत्व में जलस्रोतों की मरम्मत का कार्य आदि। इसके साथ ही एक समान मजदूरी के लिए प्रयास, विधायक निधि एवं सांसद निधि से गाँव में होने वाले निर्माण–कार्यों जैसे–सी.सी. मार्ग, मंदिर का भवन निर्माण आदि कार्य महिलाओं की भागीदारी से करने की पहल हुई। संगठन से जुड़ी महिलाएं पंचायत प्रतिनिधि बन कर समाज में समानता लाने के लिये अनेक कार्य कर रही हैं।

महिला संगठन अपनी बैठकों में गाँव की समस्याओं पर चर्चा करके सामुहिक हल खोजने का प्रयास करता है। संगठन में नब्बे से अधिक महिलाएं जुड़ी हैं। हर आयु–वर्ग की महिलाएं भागीदारी निभाती हैं। कोरोना काल के दौरान संगठन की महिलाओं ने बाहर से आ रहे प्रवासियों को सहयोग करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जहाँ इस दौरान अन्य कई स्थानों में बाहर से आने वाले लोग परेशान हो रहे थे, वहीं रूंगड़ी महिला संगठन द्वारा गाँव में क्वारंटीन सेंटर तैयार करके रहने–खाने, पानी–बिजली आदि की व्यवस्था में निरंतर सहयोग दिया गया। इसके साथ ही गाँव में होने वाले सामुहिक कार्यों में भी संगठन की विशेष भूमिका रहती है।

विगत कुछ वर्षों से गाँवों में जंगली जानवरों का आतंक बढ़ रहा है। मुख्यतः बंदर, जंगली सुअर, शाही जैसे जानवर फसलों को नुकसान पहुँचा रहे हैं। कुछ वर्ष पूर्व तक संगठन ने फसलों को घरेलू जानवरों से बचाने के लिए खुली चराई पर रोक लगा रखी थी। जंगली जानवर कभी–कभार ही गाँव की ओर आते थे। बारी–बारी से संगठन के सदस्य उन्हें भगा देते। पिछले चार–पाँच वर्षों से बंदरों व जंगली सुअरों का गाँव की ओर आना बढ़ गया है और वे बहुत अधिक संख्या में आने लगे हैं।

जंगली सुअर तैयार खड़ी फसलों को बर्बाद कर जाते हैं। घरों के आसपास उगाई जा रही सब्जी, फल इत्यादि को बंदर बर्बाद कर रहे हैं। इस कारण लोगों ने सब्जी और मक्का उगाना लगभग छोड़ दिया है। बंदरों का आतंक इतना बढ़ गया है कि पलक झपकते ही घरों के भीतर रखा हुआ सामान, अनाज सब उठा ले जा रहे हैं। छोटे बच्चों को अकेले घर में छोड़ना मुश्किल हो गया है। बच्चे अकेले घर से स्कूल या बाजार नहीं जा पा रहे हैं। बच्चों के साथ हर समय कोई न कोई वयस्क रहना चाहिए। यदि बंदरों को भगाने का प्रयास करें तो वे काटने आ रहे हैं।

गाँवों में ज्यादातर एकल परिवार ही हैं। इन परिवारों को ज्यादा दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है। महिलाओं को चारा लाने, खेतों के काम से बाहर जाना होता है। बंदरों की डर से वे बच्चों को घर में छोड़ नहीं पाती। बंदरों का बच्चों पर झपटना आम बात हो गई है। एक तरफ इन जानवरों से स्वयं को बचाना मुश्किल हो रहा है, वहीं दूसरी तरफ वर्ष भर खेतों में की गई मेहनत को बर्बाद कर रहे हैं।

रूंगड़ी व उसके आसपास के गाँवों की खेती वर्षा पर निर्भर है। एक तो गाँवों में लोगों के पास खेती योग्य भूमि ही कम है। जो भूमि है वह भी बिखरी जोत वाली असिंचित जमीन है। समय पर बारिश हो गई तो कुछ अनाज मिल जाता है लेकिन अब बंदरों के कारण यह कठिन हो रहा है। अब ज्यादातर लोग घास लेने के उद्देश्य से ही खेती कर रहे हैं। इससे जानवरों के लिए कुछ घास मिल जाती है। अब गाँवों में ऐसा कोई परिवार नहीं है जिसका स्वयं के खेतों से उगाया हुआ अनाज छः महीने चलता हो। बाजार पर निर्भरता बढ़ती जा रही है।

जंगली जानवरों को गाँवों की ओर आने से कैसे रोका जा सकता है? इस पर सरकार की ओर से काम होना चाहिए। लोग जंगली जानवरों से बचाव के लिए जो तरीके अपनाते हैं वे खतरों से भरे हैं। लोगों की मजबूरी है। यदि उन्हें कोई उपाय नहीं सुझाया गया तो वे क्या करेंगे? उनके पास अन्य कोई विकल्प नहीं है।

रूंगड़ी महिला संगठन इस विषय को ग्राम बैठकों, सार्वजनिक मंचों के साथ ही अखबारों के माध्यम से समय–समय पर उठाता आ रहा है। महिलाएं परेशान हैं लेकिन कोई भी जनप्रतिनिधि इस बात को मंच पर नहीं रख रहा है। हमारा महिला संगठन तमाम अन्य संगठनों से अपील करता है कि सभी लोग अपने–अपने स्तर पर इस गंभीर समस्या पर बात करें। शासन–प्रशासन तक अपनी बात पहुँचायें ताकि जंगली जानवरों के अतिक्रमण को रोका जा सके।

उत्तराखण्ड महिला परिषद्

उत्तराखण्ड महिला परिषद्, उत्तराखण्ड की जागरूक एवं क्रियाशील ग्रामीण महिलाओं का संगठन है जिसने ग्राम समुदाय में विकास की मुख्य–धारा के ढाँचे से अलग एक वैकल्पिक विकास की व्यवस्था और उसके क्रियान्वयन के तौर–तरीके को विकसित किया है। उत्तराखण्ड में ग्रामीण महिलाओं के सबसे बड़े संगठन के रूप में प्रतिष्ठित महिला परिषद् का काम राज्य भर में फैले हुए ग्राम–स्तरीय संगठनों व स्वैच्छिक संस्थाओं ने संभाला है, जो ग्रामीण इलाकों में परिवर्तन लाने के लिए निरंतर प्रयासरत हैं।

यद्यपि उत्तराखण्ड में महिला संगठनों के गठन एवं कार्यों की शुरूआत 1988 से हो गयी थी परंतु चार सौ पैंसठ महिला संगठनों की सोलह हजार सदस्याओं तथा बाइस स्वैच्छिक संस्थाओं की सम्मिलित आवाज से विकास संबंधी समस्याओं को संस्थात्मक, व्यवहारिक एवं वैचारिक मध्यस्थता देने की जरूरत को समझते हुए, 7 फरवरी, 2000 को उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान, अल्मोड़ा में उत्तराखण्ड महिला परिषद् का गठन किया गया। परिषद् की सदस्याओं में जाति, शैक्षणिक पृष्ठभूमि, उम्र के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता। बड़ी संख्या में पचास वर्ष से अधिक उम्र की महिलाएं कभी भी विद्यालय नहीं गयी हैं, परंतु बीस से पचास वर्ष की अधिकतर महिलाएं साक्षर हैं और शिक्षा का स्तर प्राथमिक है। गाँवों में जहाँ पूर्व प्राथमिक केन्द्र काम कर रहे हैं, वहाँ सभी लड़कियाँ माध्यमिक स्तर तक पढ़ी हैं तथा हाईस्कूल एवं इंटरमीडिएट तक पढ़ी हुई लड़कियाँ भी काफी संख्या में हैं। कुछ लड़कियों ने शिक्षिका के रूप में कार्य करते हुए बी0 ए0 एवं एम0 ए0 तक शिक्षा पूरी की है। यह जरूरी नहीं है कि गाँव की समृद्ध तथा शिक्षित महिला ही परिषद् की सबसे क्रियाशील सदस्य हो, बल्कि इस जनधारणा के विपरीत कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर या शिक्षित महिला ही अच्छा नेतृत्व कर सकती है, गाँव की प्रौढ़ महिलाएं, जो यहाँ की स्थाई निवासी हैं, खेती करती हैं, परिषद् की अधिक क्रियाशील सदस्याएं हैं।

उत्तराखण्ड महिला परिषद्, ग्रामीण महिलाओं के ऊपर विकास कार्यक्रमों को थोपती नहीं बल्कि उन्हें बालवाड़ी शिक्षिकाओं, पुरूषों, अध्यापकों, युवाओं, स्थानीय अधिकारियों तथा अन्य संगठनों से सम्बन्धित महिलाओं से प्रत्यक्ष रूप से मेल–जोल रखने तथा सीखने के अवसर प्रदान करती है। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि परिषद् केवल उन्हीं कामों को महत्व दे, जो ग्रामीण/स्थानीय महिलाओं द्वारा स्वयं आयोजित तथा क्रियान्वित किये जा सकें। स्त्री–पुरूष या फिर जातिगत असमानता से सम्बन्धित भावनाएं और बाधाएं खुलकर गोष्ठियों में सामने आते हैं, जो परिषद् द्वारा उत्तराखण्ड में विकास कार्यक्रमों को सुचारू रूप से क्रियान्वित करने की दिशा में एक अनौपचारिक एवं महत्वपूर्ण प्राथमिक कदम है।

जमीन–प्रबन्धन से जुड़े कार्यों में नर्सरी लगाना, चारा उत्पादन, घेराबंदी करना, खाद बनाना, रोकबाँध बनाना तथा जानवरों की मुक्त चराई पर सम्मिलित रूप से रोक लगाना, जंगलों को बचाना, वनीकरण तथा प्राकृतिक सम्पदाओं का पुनरूत्पादन आदि काम सम्मिलित हैं। इसके अलावा पानी से जुड़ी समस्याओं का समाधान (जैसे–पुराने स्रोतों का जीर्णोद्धार, वर्षा जल संरक्षण, पॉलीथीन की टंकियाँ, फेरो–सीमेंट टैंक और हैंडपम्प आदि) संगठनात्मक तरीके से किया जाता है। स्वास्थ्य और स्वच्छता कार्यक्रमों में शौचालय बनाना, महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं, व्यक्तिगत सफाई, घर एवं गाँव की स्वच्छता, पोषण संबंधी जानकारियों को फैलाना एवं संबंधित गतिविधियों का संचालन आदि कार्य सम्मिलित हैं। सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक असमानता संबंधी विषयों पर शिक्षा व जागरूकता लाने के लिए गोष्ठियाँ, सेमीनार, कार्यशालायें तथा प्रशिक्षणों का आयोजन किया जाता है। परिषद् की अनेक सदस्याएं पंचायत प्रतिनिधि बन कर महिलाओं की आवाज को बढ़ा रही हैं। हर वर्ष परिषद् द्वारा उत्तराखण्ड में लगभग बाइस महिला सम्मेलन आयोजित किये जाते है। साथ ही, महिला साक्षरता एवं शिक्षण कार्यक्रम भी शुरू किया गया है।

जून 2014 में सम्पन्न हुए पंचायतीराज चुनाव में उत्तराखण्ड महिला परिषद् से जुड़े हुए 526 लोग (379 महिलाएं) ग्राम–प्रधान, पंच, क्षेत्र एवं जिला पंचायत सदस्य चुने गये हैं। इसमें बारह महिलाएं क्षेत्र पंचायत सदस्य बनी हैं। महिला संगठनों की अध्यक्षा रह चुकी दो महिलाएं जिला पंचायत सदस्य चुनी गई हैं।

संगठन की सदस्याएं उत्तराखण्ड में विकास कार्यक्रमों में नीतिगत बदलाव की माँग कर रही हैं। विभिन्न कार्यक्रम जो कि ग्रामीण विकास, महिला विकास, शिक्षा, खनन, कृषि, जंगल, पानी, आयवृद्धि और पंचायती राज व्यवस्था के लिए बनाये गये हैं, उनके बारे में ग्रामीण महिलाओं की अपनी समझ, जानकारी और अनुभव है। साथ ही, उत्तराखण्ड महिला परिषद् के रूप में काम करते हुए महिलाओं ने विकास के मुद्दे पर अपनी एक वैकल्पिक समझ व कार्य–विधि विकसित की है। इन्हीं अनुभवों को आधार बनाकर उत्तराखण्ड महिला परिषद् की सदस्याएं, सरकारी नीतियों व कार्यक्रमों में बदलाव व सुधार की माँग करती हैं।

अनुराधा पांडे